परमपिता शिव परमात्मा
GOD FATHER SHIVA
विश्व महाराजा श्री नारायण
EMPEROR SHIRI NARAYAN
विश्व महारानी श्री लक्ष्मी
EMPRESS SHIRI LAKSHMI

सात दिनों का कोर्स

मनुष्य अपने जीवन में कई पहेलियाँ हल करते है और उसके फलस्वरूप इनाम पाते है | परन्तु इस छोटी-सी पहेली का हल कोई नहीं जानता कि – "मैं कौन हूँ?" यों तो हर-एक मनुष्य सारा दिन "मैं...मैं ..." कहता ही रहता है, परन्तु यदि उससे पूछा जाय कि "मैं" कहने वाला कौन है? तो वह कहेगा कि--- "मैं कृष्णचन्द हूँ... या 'मैं लालचन्द हूँ" | परन्तु सोचा जाय तो वास्तव में यह तो शरीर का नाम है, शरीर तो 'मेरा' है, 'मैं' तो शरीर से अलग हूँ | बस, इस छोटी-सी पहेली का प्रेक्टिकल हल न जानने के कारण, अर्थात स्वयं को न जानने के कारण, आज सभी मनुष्य देह-अभिमानी है और सभी काम, क्रोधादि विकारों के वश है तथा दुखी है |

अब परमपिता परमात्मा कहते है कि—"आज मनुष्य में घमण्ड तो इतना है कि वह समझता है कि—"मैं सेठ हूँ, स्वामी हूँ, अफसर हूँ....," परन्तु उस में अज्ञान इतना है कि वह स्वयं को भी नहीं जानता | "मैं कौन हूँ, यह सृष्टि रूपी खेल आदि से अन्त तक कैसे बना हुआ है, मैं इस में कहाँ से आया, कब आया, कैसे आया, कैसे सुख- शान्ति का राज्य गंवाया तथा परमप्रिय परमपिता परमात्मा (इस सृष्टि के रचयिता) कौन है?" इन रहस्यों को कोई भी नहीं जानता | अब जीवन कि इस पहेली (Puzzle of Life) को फिर से जानकर मनुष्य देही-अभिमानी बन सकता है और फिर उसके फलस्वरूप नर को श्री नारायण और नारी को श्री लक्ष्मी पद की प्राप्ति होती है और मनुष्य को मुक्ति तथा जीवनमुक्ति मिल जाती है | वह सम्पूर्ण पवित्रता, सुख एवं शान्ति को पा लेता है |

जब कोई मनुष्य दुखी और अशान्त होता है तो वह प्रभु ही से पुकार कर सकता है- "हे दुःख हर्ता, सुख-कर्ता, शान्ति-दाता प्रभु, मुझे शान्ति दो |" विकारों के वशीभूत हुआ-हुआ मुशी पवित्रता के लिए भी परमात्मा की ही आरती करते हुए कहता है- "विषय-विकार मिटाओ, पाप हरो देवा !" अथवा "हे प्रभु जी, हम सब को शुद्धताई दीजिए, दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिए |" परन्तु परमपिता परमात्मा विकारों तथा बुराइयों को दूर करने के लिए जो ईश्वरीय ज्ञान देते है तथा जो सहज राजयोग सिखाते है, प्राय: मनुष्य उससे अपरिचित है और वे इनको व्यवहारिक रूप में धारण भी नहीं करते | परमपिता परमात्मा तो हमारा पथ-प्रदर्शन करते है और हमे सहायता भी देते है परन्तु पुरुषार्थ तो हमे स्वत: ही करना होगा, तभी तो हम जीवन में सच्चा सुख तथा सच्ची शान्ति प्राप्त करेंगे और श्रेष्ठाचारी बनेगे |

आगे परमपिता परमात्मा द्वारा उद्घाटित ज्ञान एवं सहज राजयोग अ पथ प्रशस्त किया गया है इसे चित्र में भी अंकित क्या गया है तथा साथ-साथ हर चित्र की लिखित व्याख्या भी दी गयी है ताकि ये रहस्य बुद्धिमय हो जायें | इन्हें पढ़ने से आपको बहुत-से नये ज्ञान-रत्न मिलेंगे | अब प्रैक्टिकल रीति से राजयोग का अभ्यास सीखने तथा जीवन दिव्य बनाने के लिए आप इस प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विधालय के किसी भी सेवा-केन्द्र पर पधार कर नि:शुल्क ही लाभ उठावें |

आत्मा क्या है और मन क्या है ?

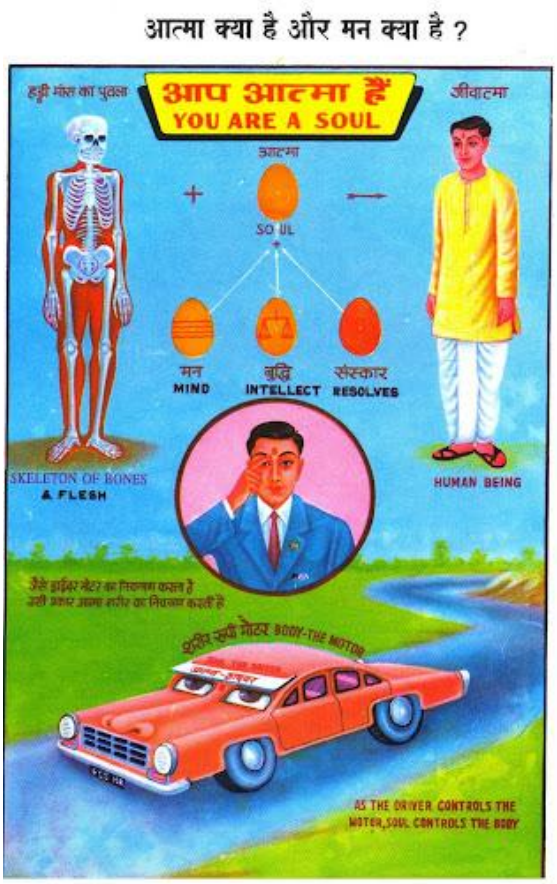

अपने सारे दिन की बातचीत में मनुष्य प्रतिदिन न जाने कितनी बार ' मैं ' शब्द का प्रयोग करता है | परन्तु यह एक आश्चर्य की बात है कि प्रतिदिन ' मैं ' और ' मेरा ' शब्द का अनेकानेक बार प्रयोग करने पर भी मनुष्य यथार्थ रूप में यह नहीं जानता कि ' मैं ' कहने वाले सत्ता का स्वरूप क्या है, अर्थात ' मैं' शब्द जिस वस्तु का सूचक है, वह क्या है ? आज मनुष्य ने साइंस द्वारा बड़ी-बड़ी शक्तिशाली चीजें तो बना डाली है, उसने संसार की अनेक पहेलियों का उत्तर भी जान लिया है और वह अन्य अनेक जटिल समस्याओं का हल ढूंढ निकलने में खूब लगा हुआ है, परन्तु ' मैं ' कहने वाला कौन है, इसके बारे में वह सत्यता को नहीं जानता अर्थात वह स्वयं को नहीं पहचानता | आज किसी मनुष्य से पूछा जाये कि- "आप कौन है ?" तो वह झट अपने शरीर का नाम बता देगा अथवा जो धंधा वह करता है वह उसका नाम बता देगा |

वास्तव में 'मैं' शब्द शरीर से भिन्न चेतन सत्ता 'आत्मा' का सूचक है जैसा कि चित्र में दिखाया गया है | मनुष्य (जीवात्मा) आत्मा और शरीर को मिला कर बनता है | जैसे शरीर पाँच तत्वों (जल, वायु, अग्नि, आकाश, और पृथ्वी) से बना हुआ होता है वैसे ही आत्मा मन, बुद्धि और संस्कारमय होती है | आत्मा में ही विचार करने और निर्णय करने की शक्ति होती है तथा वह जैसा कर्म करती है उसी के अनुसार उसके संस्कार बनते है |

आत्मा एक चेतन एवं अविनाशी ज्योति-बिन्दु है जो कि मानव देह में भृकुटी में निवास करती है | जैसे रात्रि को आकाश में जगमगाता हुआ तारा एक बिन्दु-सा दिखाई देता है, वैसे ही दिव्य-दृष्टि द्वारा आत्मा भी एक तारे की तरह ही दिखाई देती है | इसीलिए एक प्रसिद्ध पद में कहा गया है- "भृकुटी में चमकता है एक अजब तारा, गरीबां नूं साहिबा लगदा ए प्यारा |" आत्मा का वास भृकुटी में होने के कारण ही मनुष्य गहराई से सोचते समय यही हाथ लगता है | जब वह यश कहता है कि मेरे तो भाग्य खोटे है, तब भी वह यही हाथ लगता है | आत्मा का यहाँ वास होने के कारण ही भक्त-लोगों में यहाँ ही बिन्दी अथवा तिलक लगाने की प्रथा है | यहाँ आत्मा का सम्बन्ध मस्तिष्क से जुड़ा है और मस्तिष्क का सम्बन्ध सरे शरीर में फैले ज्ञान-तन्तुओं से है | आत्मा ही में पहले संकल्प उठता है और फिर मस्तिष्क तथा तन्तुओं द्वारा व्यक्त होता है | आत्मा ही शान्ति अथवा दुःख का अनुभव करती तथा निर्णय करती है और उसी में संस्कार रहते है | अतः मन और बुद्धि आत्म से अलग नहीं है | परन्तु आज आत्मा स्वयं को भूलकर देह- स्त्री, पुरुष, बूढा जवान इत्यादि मान बैठी है | यह देह-अभिमान ही दुःख का कारण है |

उपरोक्त रहस्य को मोटर के ड्राईवर के उदाहरण द्वारा भी स्पष्ट किया गया है | शरीर मोटर के समान है तथा आत्मा इसका ड्राईवर है, अर्थात जैसे ड्राईवर मोटर का नियंत्रण करता है, उसी प्रकार आत्मा शरीर का नियंत्रण करती है | आत्मा के बिना शरीर निष्प्राण है, जैसे ड्राईवर के बिना मोटर | अतः परमपिता परमात्मा कहते है कि अपने आपको पहचानने से ही मनुष्य इस शरीर रूपी मोटर को चला सकता है और अपने लक्ष्य (गन्तव्य स्थान) पर पहुंच सकता है | अन्यथा जैसे कि ड्राईवर कार चलाने में निपुण न होने के कारण दुर्घटना (Accident) का शिकार बन जाता है और कार उसके यात्रियों को भी चोट लगती है, इसी प्रकार जिस मनुष्य को अपनी पहचान नहीं है वह स्वयं तो दुखी और अशान्त होता ही है, साथ में अपने सम्पर्क में आने वाले मित्र-

सम्बन्धियों को भी दुखी व अशान्त बना देता है | अतः सच्चे सुख व सच्ची शान्ति के लिए स्वयं को जानना अति आवश्यक है |

तीन लोक कौन से है और शिव का धाम कौन सा है ?

मनुष्य आत्माएं मुक्ति अथवा पूर्ण शान्ति की शुभ इच्छा तो करती है परन्तु उन्हें यह मालूम नहीं है कि मुक्तिधाम अथवा शान्तिधाम है कहाँ ? इसी प्रकार, परमप्रिय परमात्मा शिव से मनुष्यात्माएं मिलना तो चाहती है और उसी याद भी करती है परन्तु उन्हें मालूम नहीं है कि वह पवित्र धाम कहाँ है जहाँ से हम सभी मनुष्यात्माएं सृष्टि रूपी रंगमंच पर आई है, उस प्यारे देश को सभी भूल गई है और और वापिस भी नहीं जा सकती !!

१. साकार मनुष्य लोक - सामने चित्र में दिखाया गया है कि एक है यह साकार 'मनुष्य लोक' जिसमे इस समय हम है | इसमें सभी आत्माएं हड्डी- मांसादि का स्थूल शरीर लेकर कर्म करती है और उसका फल सुख- दुःख के रूप में भोगती है तथा जन्म-मरण के चक्कर में भी आती है | इस लोक में संकल्प, ध्वनि और कर्म तीनों है | इसे ही 'पाँच तत्व की सृष्टि' अथवा 'कर्म क्षेत्र' भी कहते है | यह सृष्टि आकाश तत्व के अंश-मात्र में है | इसे सामने त्रिलोक के चित्र में उल्टे वृक्ष के रूप में दिखायागया है क्योंकि इसके बीज रूप परमात्मा शिव, जो कि जन्म-मरण से न्यारे है, ऊपर रहते है |

२.

२. सूक्ष्म देवताओं का लोक – इस मनुष्य-लोक के सूर्य तथा तारागण के पार आकाश तत्व के भी पार एक सूक्ष्म लोक है जहाँ प्रकाश ही प्रकाश है | उस प्रकाश के अंश-मात्र में ब्रह्मा, विष्णु तथा महदेव शंकर की अलग-अलग पुरियां है | इन्स देवताओं के शरीर हड्डी- मांसादि के नहीं बल्कि प्रकाश के है | इन्हें दिव्य-चक्षु द्वारा ही देखा जा सकता है | यहाँ दुःख अथवा अशांति नहीं होती | यहाँ संकल्प तो होते है और क्रियाएँ भी होती है और बातचीत भी होती है परन्तु आवाज नहीं होती |

३. ब्रह्मलोक और परलोक- इन पुरियों के भी पार एक और लिक है जिसे 'ब्रह्मलोक', 'परलोक', 'निर्वाण धाम', 'मुक्तिधाम', 'शांतिधाम', 'शिवलोक' इत्यादि नामों से याद किया जाता है | इसमें सुनहरे-लाल रंग का प्रकाश फैला हुआ है जिसे ही 'ब्रह्म तत्व', 'छठा तत्व', अथवा 'महत्त्व' कहा जा सकता है | इसके अंशमात्र ही में ज्योतिर्बिंदु आत्माएं मुक्ति की अवस्था में रहती है | यहाँ हरेक धर्म की आत्माओं के संस्थान (Section) है |

उन सभी के ऊपर, सदा मुक्त, चैतन्य ज्योति बिन्दु रूप परमात्मा 'सदाशिव' का निवास स्थान है | इस लोक में मनुष्यात्माएं कल्प के अन्त में, सृष्टि का महाविनाश होने के बाद अपने-अपने कर्मो का फल भोगकर तथा पवित्र होकर ही जाती है | यहाँ मनुष्यात्माएं देह-बन्धन, कर्म-बन्धन तथा जन्म-मरण से रहित होती है | यहाँ न संकल्प है, न वचन और न कर्म | इस लोक में परमपिता परमात्मा शिव के सिवाय अन्य कोई 'गुरु' इत्यादि नहीं ले जा सकता | इस लोक में जाना ही अमरनाथ, रामेश्वरम अथवा विश्वेश्वर नाथ की सच्ची यात्रा करना है, क्योंकि अमरनाथ परमात्मा शिव यही रहते है |

निराकार परम पिता परमात्मा और उनके दिव्य गुण

एक आश्चर्यजनक बात

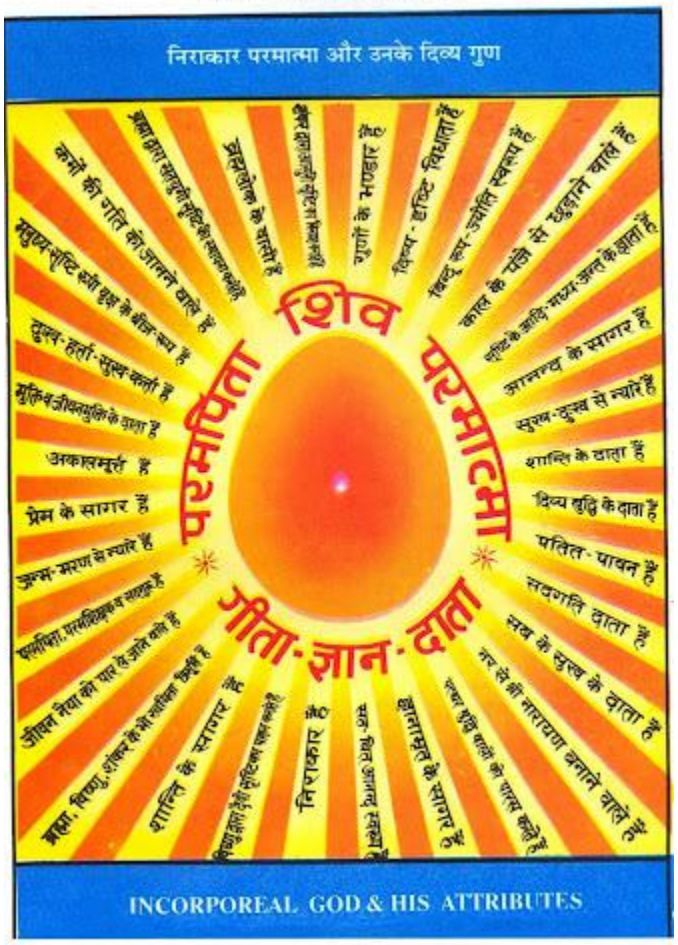

प्राय: सभी मनुष्य परमात्मा को 'हे पिता', 'हे दुखहर्ता और सुखकर्ता प्रभु', **(O Heavenly God Father)** इत्यादि सम्बन्ध-सूचको शब्दों से याद करते है | परन्तु यह कितने आश्चर्य की बात है कि जिसे वे 'पिता' कहकर पुकारते है उसका सत्य और स्पष्ट परिचय उन्हें नहीं है और उसके साथ उनका अच्छी रीती स्नेह और सम्बन्ध भी नहीं है | परिचय और स्नेह न होने के कारण परमात्मा को याद करते समय भी उनका मन एक ठिकाने पर नहीं टिकता | इसलिए, उन्हें परमपिता परमात्मा से शान्ति तथा सुख का जो जन्म-सिद्ध अधिकार प्राप्त होना चाहिए वह प्राप्त नहीं होता | वे न तो परमपिता परमात्मा के मधुर मिलन का सच्चा सुख अनुभव कर सकते है, न उससे लाईट (Light प्रकाश) और माईट (Might शक्ति) ही प्राप्त कर सकते है और न ही उनके संस्कारों तथा जीवन में कोई विशेष परिवर्तन ही आ पाता है | इसलिए हम यहाँ उस परम प्यारे परमपिता परमात्मा का संक्षिप्त परिचय दे रहे है जो कि स्वयं उन्होंने ही लोक-कल्याणार्थ हमे समझाया है और अनुभव कराया है और अब भी करा रहे है |

परमपिता परमात्मा का दिव्य नाम और उनकी महिमा

परमपिता परमात्मा का नाम 'शिव' है | 'शिव' का अर्थ 'कल्याणकारी' है | परमपिता परमात्मा शिव ही ज्ञान के सागर, शान्ति के सागर, आनन्द ए सागर और प्रेम के सागर है | वह ही पतितों को पावन करने वाले, मनुष्यमात्र को शांतिधाम तथा सुखधाम की राह दिखाने वाले (Guide), विकारों तथा काल के बन्धन से छुड़ाने वाले (Liberator) और सब प्राणियों पर रहम करने वाले (Merciful) है | मनुष्य मात्र को मुक्ति और जीवनमुक्ति का अथवा गति और सद्गति का वरदान देने वाले भी एक-मात्र वही है | वह दिव्य-बुद्धि के डाटा और दिव्य-दृष्टी के वरदाता भी है | मनुष्यात्माओ को ज्ञान रूपी सोम अथवा अमृत पिलाने तथा अमरपद का वरदान देने के कारण 'सोमनाथ' तथा 'अमरनाथ' इत्यादि नाम भी उन्ही के है | वह जन्म-मरण से सदा मुक्त, सदा एकरस, सदा जगती ज्योति, 'सदा शिव' है |

परमपिता परमात्मा का दिव्य-रूप

परमपिता परमात्मा का दिव्य-रूप एक 'ज्योति बिन्दु' के समान, दीये की लौ जैसा है | वह रूप अतिनिर्मल, स्वर्णमय लाल (Golden Red) और मन-मोहक है | उस दिव्य ज्योतिर्मय रूप को दिव्य-चक्षु द्वारा ही देखा जा सकता है और दिव्य-बुद्धि द्वारा ही अनुभव किया जा सकता है | परमपिता परमात्मा के उस 'ज्योति-बिन्दु' रूप की प्रतिमाएं भारत में 'शिव-लिंग' नाम से पूजी जाती है और उनके अवतरण की याद में 'महा शिवरात्रि' भी मनाई जाती है |

'निराकार' का अर्थ

लगभग सभी धर्मों के अनुयायी परमात्मा को 'निराकार' (Incorpeal) मानते है | परन्तु इस शब्द से वे यह अर्थ लेते है कि परमात्मा का कोई भी आकार (रूप) नहीं है | अब परमपिता परमात्मा शिव कहते है कि ऐसा मानना भूल है | वास्तव में 'निराकार' का अर्थ है कि परमपिता 'साकार' नहीं है, अर्थात न तो उनका मनुष्यों जैसा स्थूल-शारीरिक आकार है और न देवताओं-जैसा सूक्ष्म शारीरिक आकार है बल्कि उनका रूप अशरीरी है और ज्योति-बिन्दु के समान है | 'बिन्दु' को तो 'निराकार' ही कहेंगे | अतः यह एक

आश्चर्य जनक बात है कि परमपिता परमात्मा है तो सूक्ष्मतिसूक्ष्म, एक ज्योति-कण है परन्तु आज लोग प्राय: कहते है कि वह कण-कण में है |

सर्व आत्माओं का पिता परमात्मा एक है और निराकार है

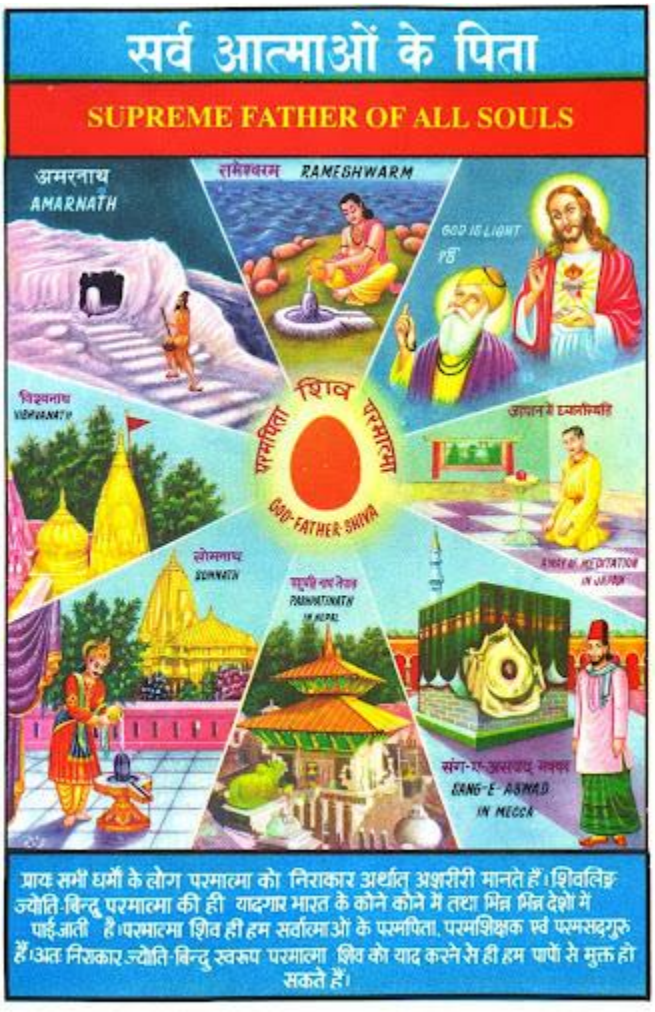

प्राय: लोग यह नारा तो लगते है कि "हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई सभी आपस में भाई-भाई है", परन्तु वे सभी आपस में भाई-भाई कैसे है और यदि वे भाई-भाई है तो उन सभी का एक पिता कौन है- इसे वे नहीं जानते | देह की दृष्टि से तो वे सभी भाई-भाई हो नहीं सकते क्योंकि उनके माता-पिता अलग-अलग है, आत्मिक दृष्टि से ही वे सभी एक परमपिता परमात्मा की सन्तान होने के नाते से भाई-भाई है | यहाँ सभी आत्माओं के एक परमपिता का परिचय दिया गया है | इस स्मृति में स्थित होने से राष्ट्रीय एकता हो सकती है |

प्राय: सभी धर्मो के लोग कहते है कि परमात्मा एक है और सभी का पिता है और सभी मनुष्य आपस में भाई-भाई है | परन्तु प्रश्न उठता है कि वह एक पारलौकिक परमपिता कौन है जिसे सभी मानते है ? आप देखगें कि भले ही हर एक धर्म के स्थापक अलग-अलग है परन्तु हर एक धर्म के अनुयायी निराकार, ज्योति-स्वरूप परमात्मा शिव की प्रतिमा (शिवलिंग) को किसी-न-किसी प्रकार से मान्यता देते है | भारतवर्ष में तो स्थान-स्थान पर परमपिता परमात्मा शिव के मंदिर है ही और भक्त-जन 'ओम् नमों शिवाय' तथा 'तुम्हीं हो माता तुम्हीं पिता हो' इत्यादि शब्दों से उसका गायन व पूजन भी करते है और शिव को श्रीकृष्ण तथा श्री राम इत्यादि देवों के भी देव

अर्थात परमपूज्य मानते ही है परन्तु भारत से बाहर, दूसरे धर्मों के लोग भी इसको मान्यता देते है | यहाँ सामने दिये चित्र में दिखाया गया है कि शिव का स्मृति-चिन्ह सभी धर्मों में है |

अमरनाथ, विश्वनाथ, सोमनाथ और पशुपतिनाथ इत्यादि मंदिरों में परमपिता परमात्मा शिव ही के स्मरण चिन्ह है | 'गोपेश्वर' तथा 'रामेश्वर' के जो मंदिर है उनसे स्पष्ट है कि 'शिव' श्री कृष्ण तथा श्री राम के भी पूज्य है | रजा विक्रमादित्य भी शिव ही की पूजा करते थे | मुसलमानों के मुख्य तीर्थ मक्का में भी एक इसी आकार का पत्थर है जिसे कि सभी मुसलमान यात्री बड़े प्यार व सम्मान से चूमते है | उसे वे 'संगे-असवद' कहते है और इब्राहिम तथा मुहम्मद द्वारा उनकी स्थापना हुई मानते है | परन्तु आज वे भी इस रहस्य को नहीं जानते कि उनके धर्म में बुतपरस्ती (प्रतिमा पूजा) की मान्यता न होते हुए भी इस आकार वाले पत्थर की स्थपना क्यों की गई है और उनके यहाँ इसे प्यार व सम्मान से चूमने की प्रथा क्यों चली आती है ? इटली में कई रोमन कैथोलिक्स ईसाई भी इसी प्रकार वाली प्रतिमा को ढंग से पूजते है | ईसाइयों के धर्म-स्थापक ईसा ने तथा सिक्खों के धर्म स्थापक नानक जी ने भी परमात्मा को एक निराकार ज्योति (Kindly Light) ही माना है | यहूदी लोग तो परमात्मा को 'जेहोवा' (Jehovah) नाम से पुकार्तेहाई जो नाम शिव (Shi va) का ही रूपान्तर मालूम होता है | जापान में भी बौद्ध-धर्म के कई अनुयायी इसी प्रकार की एक प्रतिमा अपने सामने रखकर उस पर अपना मन एकाग्र करते है |

परन्तु समयान्तर में सभी धर्मों के लोग यह मूल बात भूल गये है कि शिवलिंग सभी मनुष्यात्माओं के परमपिता का स्मरण-चिन्ह है | यदि मुसलमान यह बात जानते होते तो वे सोमनाथ के मंदिर को कभी न लूटते, बल्कि मुसलमान, ईसाई इत्यादि सभी धर्मों के अनुयायी भारत को ही परमपिता परमात्मा की अवतार-भूमि मानकर इसे अपना सबसे मुख्य तीर्थ मानते और इस प्रकार संसार का इतिहास ही कुछ और होता | परन्तु एक पिता को भूलने के कारण संसार में लड़ाई-झगड़ा दुःख तथा क्लेश हुआ और सभी अनाथ व कंगाल बन गये |

परमपिता परमात्मा और उनके दिव्य कर्तव्य

सामने परमपिता परमात्मा ज्योति-बिन्दु शिव का जो चित्र दिया गया है, उस द्वारा समझाया गया है कि कलियुग के अन्त में धर्म-ग्लानी अथवा अज्ञान-रात्रि के समय, शिव सृष्टि का कल्याण करने के लिए सबसे पहले तीन सूक्ष्म देवता ब्रह्मा, विष्णु और शंकर को रचते है और इस कारण शिव 'त्रिमूर्ति' कहलाते है | तीन देवताओं की रचना करने के बाद वह स्वयं इस मनुष्य-लोक में एक साधारण एवं वृद्ध भक्त के तन में अवतरित होते है, जिनका नाम वे 'प्रजापिता ब्रह्मा' रखते है |

प्रजा पिता ब्रह्मा द्वारा ही परमात्मा शिव मनुष्यात्माओं को पिता, शिक्षक तथा सद्गुरु के रूप में मिलते है और सहज गीता ज्ञान तथा सहज राजयोग सिखा कर उनकी सद्गति करते है, अर्थात उन्हें जीवन-मुक्ति देते है |

शंकर द्वारा कलियुगी सृष्टि का महाविनाश

कलियुगी के अन्त में प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा सतयुगी दैवी सृष्टि की स्थपना के साथ परमपिता परमात्मा शिव पुरानी, आसुरी सृष्टि के महाविनाश की तैयारी भी शुरू करा देते है | परमात्मा शिव शंकर के द्वारा विज्ञान-गर्वित (Science-Proud) तथा विपरीत बुद्धि अमेरिकन लोगों तथा यूरोप-वासियों (यादवों) को प्रेर कर उन द्वारा ऐटम और हाइड्रोजन बम और मिसाइल (Missiles) तैयार कृते है, जिन्हें कि महभारत में 'मुसल' तथा

'ब्रह्मास्त्र' कहा गया है | इधर वे भारत में भी देह-अभिमानी, धर्म-भ्रष्ट तथा विपरीत बुद्धि वाले लोगों (जिन्हें महाभारत की भाषा में 'कौरव' कहा गया है) को पारस्परिक युद्ध (Civil War) के लिए प्रेरते हगे |

विष्णु द्वारा पालना

विष्णु की चार भुजाओं में से दो भुजाएँ श्री नारायण की और दो भुजाएँ श्री लक्ष्मी की प्रतीक है | 'शंख' उनका पवित्र वचन अथवा ज्ञान-घोष की निशानी है, 'स्वदर्शन चक्र' आत्मा (स्व) के तथा सृष्टि चक्र के ज्ञान का प्रतीक है, 'कमल पुष्प' संसार में रहते हुए अलिप्त तथा पवित्र रहने का सूचक है तथा 'गदा' माया पर, अर्थात पाँच विकारों पर विजय का चिन्ह है | अतः मनुष्यात्माओं के सामने विष्णु चतुर्भुज का लक्ष्य रखते हुए परमपिता परमात्मा शिव समझते है कि इन अलंकारों को धारण करने से अर्थात इनके रहस्य को अपने जीवन में उतरने से नर 'श्री नारायण' और नारी 'श्री लक्ष्मी' पद प्राप्त कर लेती है, अर्थात मनुष्य दो ताजों वाला 'देवी या देवता' पद पद लेता है | इन दो ताजों में से एक ताज तो प्रकाश का ताज अर्थात प्रभा-मंडल (Crown of Light) है जो कि पवित्रता व शान्ति का प्रतीक है और दूसरा रत्न-जडित सोने का ताज है जो सम्पति अथवा सुख का अथवा राज्य भाग्य का सूचक है |

इस प्रकार, परमपिता परमात्मा शिव सतयुगी तथा त्रेतायुगी पवित्र, देवी सृष्टि (स्वर्ग) की पलना के संस्कार भरते है, जिसके फल-स्वरूप ही सतयुग में श्री नारायण तथा श्री लक्ष्मी (जो कि पूर्व जन्म में प्रजापिता ब्रह्मा और सरस्वती थे) तथा सूर्यवंश के अन्य रजा प्रजा-पालन का कार्य करते है और त्रेतायुग में श्री सीता व श्री राम और अन्य चन्द्रवंशी रजा राज्य करते है |

मालुम रहे कि वर्तमान समय परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा तथा तीनों देवताओं द्वारा उपर्युक्त तीनो कर्तव्य करा रहे है | अब हमारा कर्तव्य है कि परमपिता परमात्मा शिव तथा प्रजापिता ब्रह्मा से अपना आत्मिक सम्बन्ध जोड़कर पवित्र बनने का पुरषार्थ कर्ण व सच्चे वैष्णव बनें | मुक्ति और जीवनमुक्ति के ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार के लिए पूरा पुरुषार्थ करें |

परमत्मा का दिव्य – अवतरण

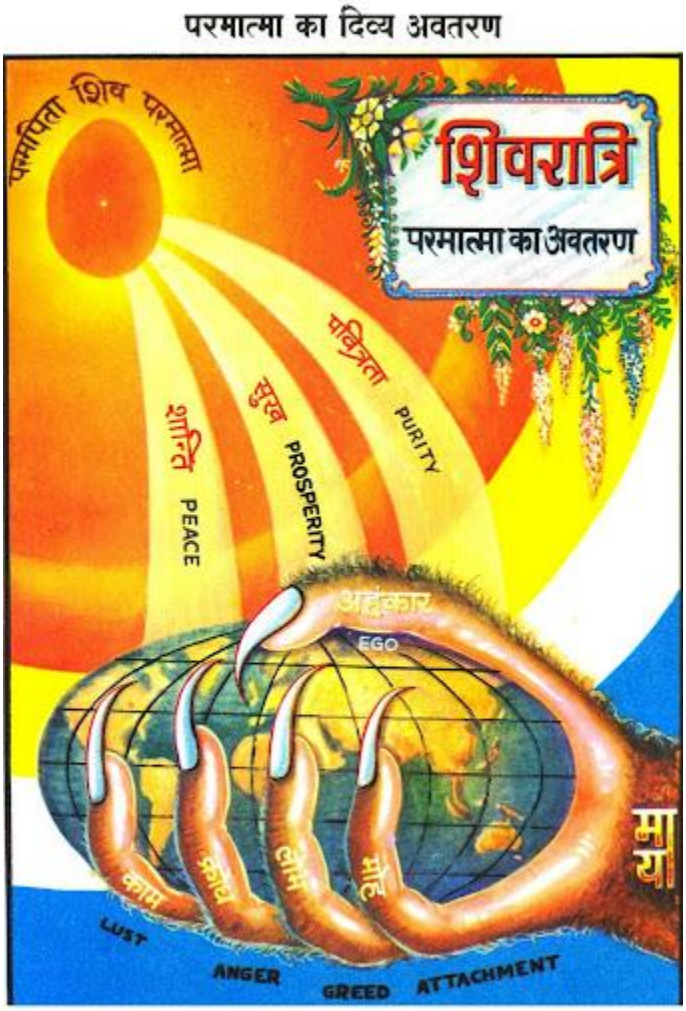

शिव का अर्थ है – 'कल्याणकारी' | परमात्मा का यह नाम इसलिए है, वह धर्म-ग्लानी के समय, जब सभी मनुष्य आत्माएं माया (पाँच विकारों) के कर्ण दुखी, अशान्त, पतित एवं भ्रष्टाचारी बन जाती है तब उनको पुन: पावन तथा सम्पूर्ण सुखी बनाने का कल्याणकारी कर्तव्य करते है | शिव ब्रह्मलोक में निवास करते है और वे कर्म-भ्रष्ट तथा धर्म भ्रष्ट संसार का उद्धार करने के लिए ब्रह्मलोक से नीचे उतर कर एक मनुष्य के शरीर का आधार लेते है | परमात्मा शिव के इस अवतरण अथवा दिव्य एवं अलौकिक जन की पुनीत-स्मृति में ही 'शिव रात्रि', अर्थात शिवजयंती का त्यौहार मनाया जाता है |

परमात्मा शिव जो साधारण एवं वृद्ध मनुष्य के तम में अवतरित होते है, उसको वे परिवर्तन के बाद 'प्रजापिता ब्रह्मा' नाम देते है | उन्हीं की याद में शिव की प्रतिमा के सामने ही उनका वाहन 'नन्दी-गण' दिखाया जाता है | क्योंकि परमात्मा सर्व आत्माओं के माता-पिता है, इसलिए वे किसी माता के गर्भ से जन्म नहीं लेते बल्कि ब्रह्मा के तन में संनिवेश ही उनका दिव्य-जन्म अथवा अवतरण है |

अजन्मा परमात्मा शिव के दिव्य जन्म की रीति न्यारी

परमात्मा शिव किसी पुरुष के बीज से अथवा किसी माता के गर्भ से जन्म नहीं लेते क्योंकि वे तो स्वयं ही सबके माता-पिता है, मनुष्य-सृष्टि के चेतन बीज रूप है और जन्म-मरण तथा कर्म-बन्धन से रहित है | अत: वे एक साधारण मनुष्य के वृद्धावस्था वाले तन में प्रवेश करते है | इसे ही परमात्मा शिव का 'दिव्य-जन्म' अथवा 'अवतरण' भी कहा जाता है क्योंकि जिस तन में वे प्रवेश करते है वह एक जन्म-मरण तथा कर्म बन्धन के चक्कर में आने वाली मनुष्यात्मा ही का शरीर होता है, वह परमात्मा का 'अपना' शरीर नहीं होता |

अत: चित्र में दिखाया गया है कि जब सारी सृष्टि माया (अर्थात काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि पाँच विकारों) के पंजे में फंस जाती है तब परमपिता परमात्मा शिव, जो कि आवागमन के चक्कर से मुक्त है, मनुष्यात्माओं को पवित्रता, सुख और शान्ति का वरदान देकर माया के पंजे से छुड़ाते है | वे ही सहज ज्ञान और राजयोग की शिक्षा देते है तथा सभी आत्माओं को परमधाम में ले जाते है तथा मुक्ति एवं जीवनमुक्ति का वरदान देते है |

शिव रात्रि का त्यौहार फाल्गुन मास, जो कि विक्रमी सम्वत का अंतिम मास होता है, में आता है | उस समय कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी होती है और पूर्ण अन्धकार होता है | उसके पश्चात शुक्ल पक्ष का आरम्भ होता हुई और कुछ ही दिनों बाद नया संवत आरम्भ होता है | अत: रात्री की तरह फाल्गुन की कृष्ण चतुर्दशी भी आत्माओं को अज्ञान अन्धकार, विकार अथवा आसुरी लक्षणों की पराकाष्ठा के अन्तिम चरण का बोधक है | इसके पश्चात आत्माओं का शुक्ल पक्ष अथवा नया कल्प प्रारम्भ होता है, अर्थात अज्ञान और दु:ख के समय का अन्त होकर पवित्र तथा सुख अ समय शुरू होता है |

परमात्मा शिव अवतरित होकर अपने ज्ञान, योग तथा पवित्रता द्वारा आत्माओं में आध्यात्मिक जागृति उत्पन्न करते है इसी महत्व के फलस्वरूप भक्त लोग शिवरात्रि को जागरण करते है | इस दिन मनुष्य उपवास, व्रत आदि भी रखते है | उपवास (उप-निकट, वास-रहना) का वास्तविक अर्थ है ही परमत्मा के समीप हो जाना | अब परमात्मा से युक्त होने के लिए पवित्रता का व्रत लेना जरूरी है |

शिव और शंकर में अन्तर

शिव और शंकर में अन्तर

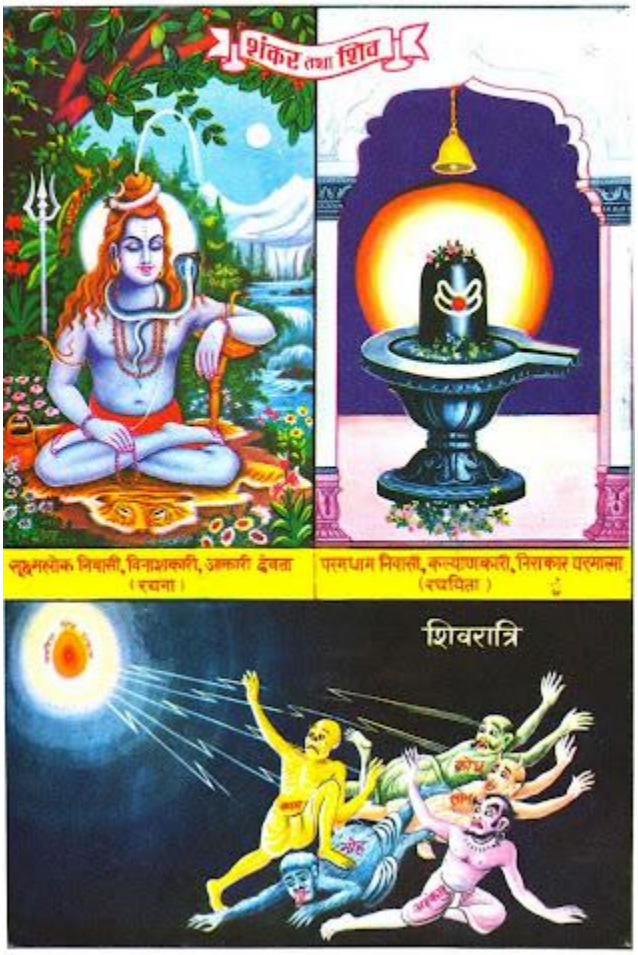

शिव और शंकर में अन्तर

बहुत से लोग शिव और शंकर को एक ही मानते है, परन्तु वास्तव में इन दोनों में भिन्नता है | आप देखते है कि दोनों की प्रतिमाएं भी अलग-अलग आकार वाली होती है | शिव की प्रतिमा अण्डाकार अथवा अंगुष्ठाकार होती है जबकि महादेव शंकर की प्रतिमा शारारिक आकार वाली होती है | यहाँ उन दोनों का अलग-अलग परिचय, जो कि परमपिता परमात्मा शिव ने अब स्वयं हमे समझाया है तथा अनुभव कराया है स्पष्ट किया जा रह है :-

महादेव शंकर

१. यह ब्रह्मा और विष्णु की तरह सूक्ष्म शरीरधारी है | इन्हें 'महादेव' कहा जाता है परन्तु इन्हें 'परमात्मा' नहीं कहा जा सकता |

२. यह ब्रह्मा देवता तथा विष्णु देवता की रथ सूक्ष्म लोक में, शंकरपुरी में वास करते है |

३. ब्रह्मा देवता तथा विष्णु देवता की तरह यह भी परमात्मा शिव की रचना है |

४. यह केवल महाविनाश का कार्य करते है, स्थापना और पालना के कर्तव्य इनके कर्तव्य नहीं है |

परमपिता परमात्मा शिव

१. यह चेतन ज्योति-बिन्दु है और इनका अपना कोई स्थूल या सूक्ष्म शरीर नहीं है, यह परमात्मा है |

२. यह ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर के लोक, अर्थात सूक्ष्म देव लोक से भी परे 'ब्रह्मलोक' (मुक्तिधाम) में वास करते है |

३. यह ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर के भी रचियता अर्थात 'त्रिमूर्ति' है |

४. यह ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर द्वारा महाविनाश और विष्णु द्वारा विश्व का पालन कराके विश्व का कल्याण करते है |

शिव का जन्मोत्सव रात्रि में क्यों ?

'रात्रि' वास्तव में अज्ञान, तमोगुण अथवा पापाचार की निशानी है | अतः द्वापरयुग और कलियुग के समय को 'रात्रि' कहा जाता है | कलियुग के अन्त में जबकि साधू, सन्यासी, गुरु, आचार्य इत्यादि सभी मनुष्य पतित तथा दुखी होते है और अज्ञान-निंद्रा में सोये पड़े होते है, जब धर्म की ग्लानी होती है और जब यह भरत विषय-विकारों के कर्ण वेश्यालय बन जाता है, तब पतित-पावन परमपिता परमात्मा शिव इस सृष्टि में दिव्य-जन्म लेते है | इसलिए अन्य सबका जन्मोत्सव तो 'जन्म दिन' के रूप में मनाया जाता है परन्तु परमात्मा शिव के जन्म-दिन को 'शिवरात्रि' (Birth-night) ही कहा जाता है | अतः यहाँ चित्र में जो कालिमा अथवा अन्धकार दिखाया गया है वह अज्ञानान्धकार अथवा विषय-विकारों की रात्रि का घोतक है |

ज्ञान-सूर्य शिव के प्रकट होने से सृष्टि से अज्ञानान्धकार तथा विकारों का नाश

जब इस प्रकार अवतरित होकर ज्ञान-सूर्य परमपिता परमात्मा शिव ज्ञान-प्रकाश देते है तो कुछ ही समय में ज्ञान का प्रभाव सारे विश्व में फ़ैल जाता है और कलियुग तथा तमोगुण के स्थान पर संसार में सतयुग और सतोगुण कि स्थापना हो जाती है और अज्ञान-अन्धकार का तथा विकारों का विनाश हो जाता है | सारे कल्प में परमपिता परमात्मा शिव के एक अलौकिक जन्म से थोड़े ही समय में यह सृष्टि वेश्यालय से बदल कर शिवालय बन जाती है और नर को श्री नारायण पद तथा नारी को श्री लक्ष्मी पद का प्राप्ति हो जाती है | इसलिए शिवरात्रि हीरे तुल्य है |

परमात्मा सर्व व्यापक नहीं है

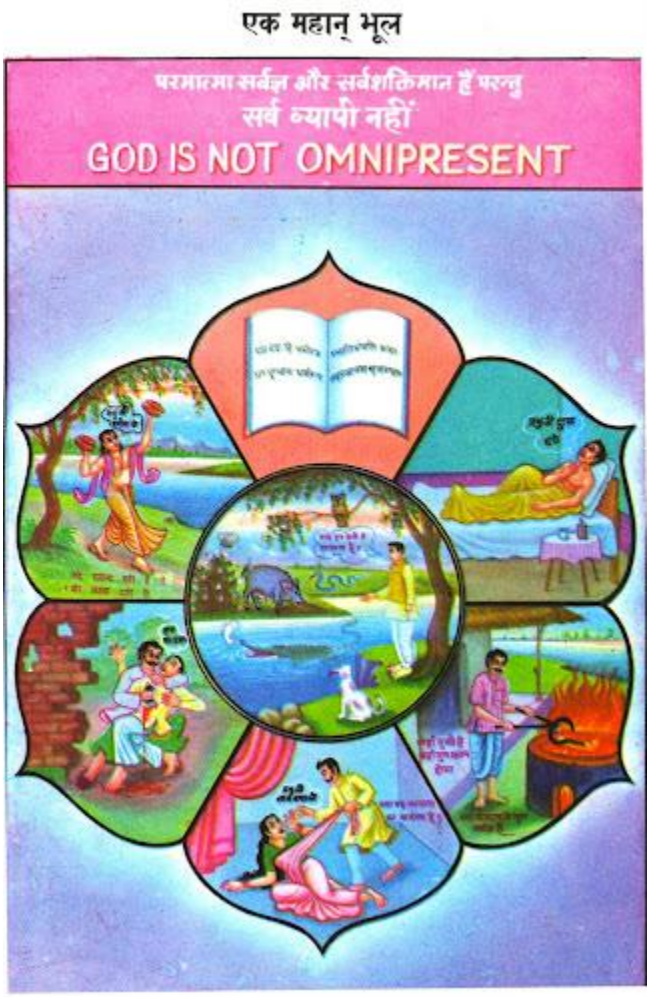

एक महान भूल

परमात्मा सर्व व्यापक नहीं है

यह कितने आश्चर्य की बात है कि आज एक और तो लोग परमात्मा को 'माता-पिता' और 'पतित-पावन' मानते है और दूसरी और कहते है कि परमात्मा सर्व-व्यापक है, अर्थात वह तो ठीकर-पत्थर, सर्प, बिच्छू, वाराह, मगरमच्छ, चोर और डाकू सभी में है ! ओह, अपने परम प्यारे, परम पावन, परमपिता के बारे में यह कहना कि वह कुते में, बिल्ले में, सभी में है – यह कितनी बड़ी भूल है ! यह कितना बड़ा पाप है !! जो पिता हमे मुक्ति और जीवनमुक्ति की विरासत (जन्म-सिद्ध अधिकार) देता है, और हमे पतित से पावन बनाकर स्वर्ग का राज्य देता है, उसके लिए ऐसे शब्द कहना गोया कृतघ्न बनना ही तो है !!!

यदि परमात्मा सर्वव्यापी होते तो उसके शिवलिंग रूप की पूजा क्यों होती ? यदि वह यत्र-तत्र-सर्वत्र होते तो वह 'दिव्य जन्म' कैसे लेते, मनुष्य उनके अवतरण के लिए उन्हें क्यों पुकारते और शिवरात्रि का त्यौहार क्यों मनाया जाता ? यदि परमात्मा सर्व-व्यापक होते तो वह गीता-ज्ञान कैसे देते और गीता में लिखे हुए उनके यह महावाक्य कैसे सत्य सिद्ध होते कि "मैं परम पुरुष (पुरुषोतम) हौं, मैं सूर्य और तारागण के प्रकाश की पहुँच से भी प्रे परमधाम का वासी हूँ, यह सृष्टि एक उल्टा वृक्ष है और मैं इसका बीज हूँ जो कि ऊपर रहता हूँ |"

यह जो मान्यता है कि "परमात्मा सर्वव्यापी है" – इससे भक्ति, ज्ञान, योग इत्यादि सभी का खण्डन हो गया है क्योंकि यदि ज्योतिस्वरूप भगवान का कोई नाम और रूप ही न हो तो न उससे सम्बन्ध (योग) जोड़ा जा सकता है, न ही उनके प्रति स्नेह और भक्ति ही प्रगट की जा सकती है और न ही उनके नाम और कर्तव्यों की चर्चा ही हो सकती है जबकि 'ज्ञान' का तो अर्थ ही किसी के नाम, रूप, धाम, गुण, कर्म, स्वभाव, सम्बन्ध, उससे होने वाली प्राप्ति इत्यादि का परीच है | अतः परमात्मा को सर्वव्यापक मानने के कारण आज मनुष्य 'मन्मनाभाव' तथा 'मामेकं शरणं व्रज' की ईश्वराज्ञा पर नहीं चल सकते अर्थात बुद्धि में एक ज्योति स्वरूप परमपिता परमात्मा शिव की याद धारण नहीं कर सकते और उससे स्नेह सम्बन्ध नहीं जोड़ सकते बल्कि उनका मन भटकता रहता है | परमात्मा चैतन्य है, वह तो हमारे परमपिता है, पिता तो कभी सर्वव्यापी नहीं होता | अतः परमपिता परमात्मा को सर्वव्यापी मानने से ही सभी नर-नारी योग-भ्रष्ट और पतित हो गये है और उस परमपिता की पवित्रता-सुख-शान्ति रूपी बपौती (विरासत) से वंचित हो दुखी तथा अशान्त है |

अतः स्पष्ट है कि भक्तों का यह जो कथन है कि – 'परमात्मा तो घट-घट का वासी है' इसका भी शब्दार्थ लेना ठीक नहीं है | वास्तव में 'गत' अथवा 'हृदय' को प्रेम एवं याद का स्थान माना गया है | द्वापर युग के शुरू के लोगों में ईश्वर-भक्ति अथवा प्रभु में आस्था एवं श्रद्धा बहुत थी | कोई विरला ही ऐसा व्यक्ति होता था जो परमात्मा को ना मानता हो | अतः उस समय भाव-विभोर भक्त यह ख दिया करते थे कि ईश्वर तो घट-घट वासी है अर्थात उसे तो सभी याद और प्यार करते है और सभी के मन में ईश्वर का चित्र बीएस रहा है | इन शब्दों का अर्थ यह लेना कि स्वयं ईश्वर ही सबके हृदयों में बस रहा है, भूल है |

सृष्टि रूपी उल्टा आ अदभुत वृक्ष और उसके बीजरूप परमात्मा

सृष्टि रूपी उल्टा आ अदभुत वृक्ष और उसके बीजरूप परमात्मा

भगवान ने इस सृष्टि रूपी वृक्ष की तुलना एक उल्टे वृक्ष से की है क्योंकि अन्य वृक्षों के बीज तो पृथ्वी के अंदर बोये जाते है और वृक्ष ऊपर को उगते है परन्तु मनुष्य-सृष्टि रूपी वृक्ष के जो अविनाशी और चेतन बीज स्वरूप परमपिता परमात्मा शिव है, वह स्वयं ऊपर परमधाम अथवा ब्रह्मलोक में निवास करते है |

चित्र में सबसे नीचे कलियुग के अन्त और सतयुग के आरम्भ का संगम दिखलाया गया है | वहाँ श्वेत-वस्त्रधारी प्रजापिता ब्रह्मा, जगदम्बा सरस्वती तथा कुछ ब्राह्मनियाँ और ब्राह्मण सहज राजयोग की स्थिति में बैठे है | इस चित्र द्वारा यह रहस्य प्रकट किया जाता है कि कलियुग के अन्त में अज्ञान रूपी रात्रि के समय, सृष्टि के बीजरूप, कल्याणकारी, ज्ञान-सागर परमपिता परमात्मा शिव नई, पवित्र सृष्टि रचने के संकल्प से प्रजापिता ब्रह्मा के तन में अवतरित (प्रविष्ट) हुए और उनहोंने प्रजापिता ब्रह्मा के कमल-मुख द्वारा मूल गीता-ज्ञान तथा सहज राजयोग की शिक्षा दी, जिसे धारण करने वाले नर-नारी 'पवित्र ब्राह्मण' कहलाये | ये ब्राह्मण और ब्राह्मनियाँ – सरस्वती इत्यादि- जिन्हें ही 'शिव शक्तियाँ' भी कहा जाता है, प्रजापिता ब्रह्मा के मुख से (ज्ञान द्वारा) उत्पन्न हुए | इस छोटे से युग को 'संगम युग' कहा जाता है | वह युग सृष्टि का 'धर्माऊ युग' (Leap

yuga) भी कहलाता है और इसे ही 'पुरुषोतम युग' अथवा 'गीता युग' भी कहा जा सकता है |

सतयुग में श्रीलक्ष्मी और श्री नारायण का अटल, अखण्ड, निर्विघ्न और अति सुखकारी राज्य था | प्रसिद्ध है कि उस समय दूध और घी की नदियां बहती थी तथा शेर और गाय भी एक घाट पर पानी पीते थे | उस समय का भारत डबल सिरताज (Double crowned) था | सभी सदा स्वस्थ (Ever healthy), और सदा सुखी (Ever happy) थे | उस समय काम-क्रोधादि विकारों की लड़ाई अथवा हिंसा का तथा अशांति एवं दुखों का नाम-निशान भी नहीं था | उस समय के भारत को 'स्वर्ग', 'वैकुण्ठ', 'बहिश्त', 'सुखधाम' अथवा 'हैवनली एबोड' (Heavenly Abode) कहा है उस समय सभी जीवनमुक्त और पूज्य थे और उनकी औसत आयु १५० वर्ष थी उस युग के लोगो को 'देवता वर्ण' कहा जाता है | पूज्य विश्व-महारानी श्री लक्ष्मी तथा पूज्य विश्व-महाराजन श्री नारायण के सूर्य वंश में कुल 8 सूर्यवंशी महारानी तथा महाराजा हुए जिन्होंने कि 1250 वर्षों तक चक्रवर्ती राज्य किया |

त्रेता युग में श्री सीता और श्री राम चन्द्रवंशी, 14 कला गुणवान और सम्पूर्ण निर्विकारी थे | उनके राज्य की भी भारत में बहुत महिमा है | सतयुग और त्रेतायुग का 'आदि सनातन देवी-देवता धर्म-वंश' ही इस मनुष्य सृष्टि रूपी वृक्ष का तना और मूल है जिससे ही बाद में अनेक धर्म रूपी शाखाएं निकली | द्वापर में देह-अभिमान तथा काम क्रोधादि विकारों का प्रादुर्भाव हुआ | देवी स्वभाव का स्थान आसुरी स्वभाव ने लेना शुरू किया | सृष्टि में दुःख और अशान्ति का भी राज्य शरू हुआ | उनसे बचने के लिए मनुष्य ने पूजा तथा भक्ति भी शुरू की | ऋषि लोग शास्त्रों की रचना करने लगे | यज्ञ, तप आदि की शुरात हुई |

कलियुग में लोग परमात्मा शिव की तथा देवताओं की पूजा के अतिरिक्त सूर्य की, पीपल के वृक्ष की, अग्नि की तथा अन्यान्य जड़ तत्वों की पूजा करने लगे और बिल्कुल देह-अभिमानी, विकारी और पतित बन गए | उनका आहार-व्यहार, दृष्टि वृत्ति, मन, वचन और कर्म तमोगुणी और विकाराधीन हो गया |

कलियुग के अन्त में सभी मनुष्य त्मोप्रधन और आसुरी लक्षणों वाले होते है | अत: सतयुग और त्रेतायुग की सतोगुणी दैवी सृष्टि स्वर्ग (वैकुण्ठ) और उसकी तुलना में द्वापरयुग तथा कलियुग की सृष्टि ही 'नरक' है |

प्रभु मिलन का गुप्त युग—पुरुषोतम संगम युग

भारत में आदि सनातन धर्म के लोग जैसे अन्य त्यौहारों, पर्वो इत्यादि को बड़ी श्रद्धा से मानते है, वैसे ही पुरुषोतम मास को भी मानते है | इस मास में लोग तीर्थ यात्रा का विशेष महात्म्य मानते है और बहुत दान-पुन्य भी करते है तथा आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा में भी काफी समय देते है | वे प्रात: अमृत्वेले ही गंगा-स्नान करने में बहुत पूण्य समझते है |

वास्तव में 'पुरुषोतम' शब्द परमपिता परमात्मा ही का वाचक है | जैसे 'आत्मा' को 'पुरुष' भी कहा जाता है, वैसे ही परमात्मा के लिए 'परम-पुरुष' अथवा 'पुरुषोतम' शब्द का प्रयोग होता है क्योंकि वह सभी पुरुषों (आत्माओ) से ज्ञान, शान्ति, पवित्रता और शक्ति में उतम है | 'पुरुषोतम मास' कलियुग के अन्त और सतयुग के आरम्भ के संगम का युग की याद दिलाता है क्योंकि इस युग में पुरुषोतम (परमपिता) परमात्मा का अवतरण होता है | सतयुग के आरम्भ से लेकर कलियुग के अन्त तक तो मनुष्यात्माओं का जन्म-पुनर्जन्म होता ही रहता है परन्तु कलियुग के अन्त में सतयुग और सतधर्म की तथा उतम मर्यादा की पुन: स्थापना

करने के लिए पुरुषोतम (परमात्मा) को आना पड़ता है | इस 'संगमयुग' में परमपिता परमात्मा मनुष्यात्माओं को ज्ञान और सहज राजयोग सिखाकर वापिस परमधाम अथवा ब्रह्मलोक में ले जाते है और अन्य मनुष्यात्माओं को सृष्टि के महाविनाश के द्वारा अशरीरी करके मुक्तिधाम ले जाते है | इस प्रकार सभी मनुश्यात्माए शिव पूरी अठाव विष्णुपुरी की अव्यक्ति एवं आध्यात्मिक यात्रा करती है और ज्ञान चर्चा अथवा ज्ञान-गंगा में स्नान करके पावन बनती है | परन्तु आज लोग इन रहस्यों को न जानने के कारण गंगा नदी में स्नान करते है और शिव तथा विष्णु की स्थूल यादगारों की यात्रा करते है | वास्तव में 'पुरुषोतम मास' में जिस दान का महत्व है, वह दान पाँच विकारों का दान है | परमपिता परमात्मा जब पुरुषोतम युग में अवतरित होते है तो मनुष्य आत्माओं को बुराइयों अथवा विकारों का दान देने की शिक्षा देते है | इस प्रकार, वे काम-क्रोधादि विकारों को त्याग कर मर्यादा वाले बन जाते है और उसके बाद सतयुग, देयुग का आरम्भ हो जाता है | आज यदि इन रहस्यों को जानकर मनुष्य विकारों का दान दे, ज्ञान-गंगा में नित्य स्नान करे और योग द्वारा देह से न्यारा होकर सच्ची आध्यात्मिक यात्रा करें तो विश्व में पुनः सुख, शान्ति सम्पन्न राम-राज्य (स्वर्ग) की स्थापना हो जायगी और नर तथा नारी नर्क से निकल स्वर्ग में पहुँच जाएगें | चित्र में भी इसी रहस्य को प्रदर्शित किया गया है |

यहाँ संगम युग में श्वेत वस्त्रधारी प्रजापिता ब्रह्मा, जगदम्बा सरस्वती तथा कुछेक मुख वंशी ब्राह्मणों और ब्राह्मणियों को परमपिता परमात्मा शिव से योग लगाते दिखाया गया है | इस राजयोग द्वारा ही मन का मेल धुलता है, पिछले विकर्म दग्ध होते है और संस्कार स्तोप्रधन बनते है | अतः नीचे की और नर्क के व्यक्ति ज्ञान एवं योग-अग्नि प्रज्जवलित करके काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार को इस सूक्ष्म अग्नि में स्वाह करते दिखाया गये है | इसी के फलस्वरूप, वे नर से श्री नारायण और नारी से श्री लक्ष्मी बनकर अर्थात 'मनुष्य से देवता' पद का अधिकार पाकर सुखधाम-वैकुण्ठ अथवा स्वर्ग में पवित्र एवं सम्पूर्ण सुख-शान्ति सम्पन्न स्वराज्य के अधिकारी बनें है |

मालुम रहे कि वर्तमान समय यह संगम युग ही चल रहा है | अब यह कलियुगी सृष्टि नरक अर्थात दुःख धाम है अब निकट भविष्य में सतयुग आने वाला है जबकि यही सृष्टि सुखधाम होगी | अतः अब हमे पवित्र एवं योगी बनना चाहिए |

मनुष्य के 84 जन्मों की अद्-भुत कहानी

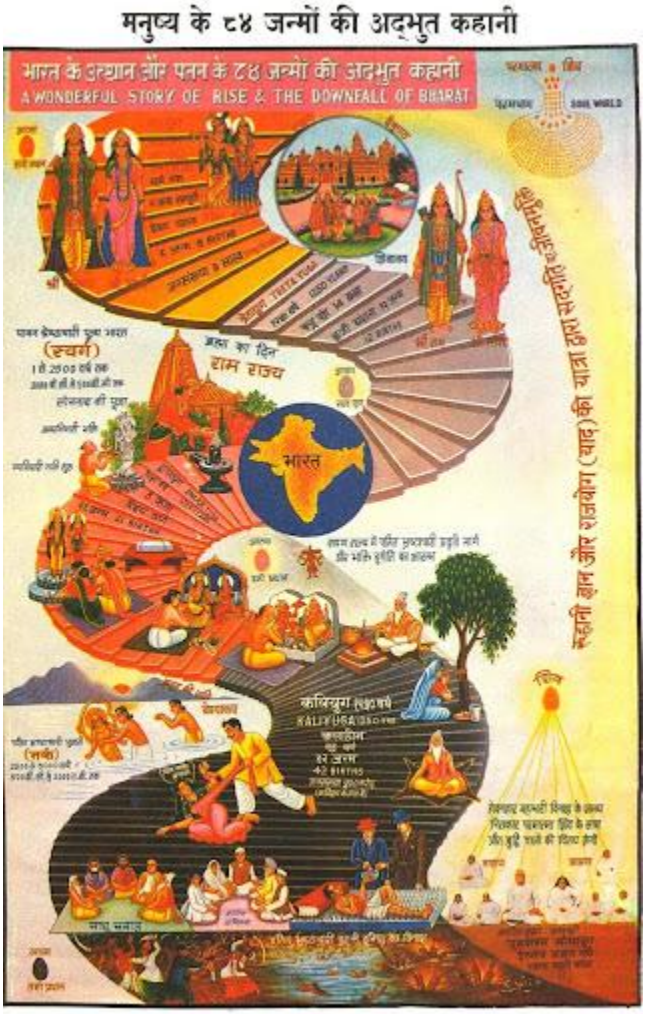

मनुष्यात्मा सारे कल्प में अधिक से अधिक कुल 84 जन्म लेती है, वह 84 लाख योनियों में पुनर्जन्म नहीं लेती | मनुष्यात्माओं के 84 जन्मों के चक्र को ही यहाँ 84 सीढ़ियों के रूप में चित्रित किया गया है | चूँकि प्रजापिता ब्रह्मा और जगदम्बा सरस्वती मनुष्य-समाज के आदि-पिता और आदि-माता है, इसलिए उनके 84 जन्मों का संक्षिप्त उल्लेख करने से अन्य मनुष्यात्माओं का भी उनके अन्तर्गत आ जायेगा | हम यह तो बता आये है कि ब्रह्मा और सरस्वती संगम युग में परमपिता शिव के ज्ञान और योग द्वारा सतयुग के आरम्भ में श्री नारायण और श्री लक्ष्मी पद पाते है |

सतयुग और त्रेतायुग में 21 जन्म पूज्य देव पद :

अब चित्र में दिखलाया गया है कि सतयुग के 1250 वर्षों में श्रीलक्ष्मी, श्रीनारायण 100 प्रतिशत सुख-शान्ति-सम्पन्न 8 जन्म लेते है | इसलिए भारत में 8 की संख्या शुभ मानी गई है और कई लोग केवल 8 मनको की माला सिमरते है तथा अष्ट देवताओं का पूजन भी करते है | पूज्य स्तिथि वाले इन 8 नारायणी जन्मों को यहाँ 8 सीढ़ियों के रूप में चित्रित किया गया है | फिर त्रेतायुग के 1250 वर्षों में वे 14 कला सम्पूर्ण सीता और रामचन्द्र के वंश में पूज्य राजा-रानी अथवा उच्च प्रजा के रूप में कुल 12 या 13 जन्म लेते है | इस प्रकार सतयुग और त्रेता के कुल 2500 वर्षों में वे सम्पूर्ण पवित्रता,

सुख, शान्ति और स्वास्थ्य सम्पन्न 21 दैवी जन्म लेते है | इसलिए ही प्रसिद्ध है कि ज्ञान द्वारा मनुष्य के 21 जन्म अथवा 21 पीढ़ियां सुधर जाती है अथवा मनुष्य 21 पीढियों के लिए तर जाता है |

द्वापर और कलियुग में कुल 63 जन्म जीवन-बद्ध :

फिर सुख की प्रारब्ध समाप्त होने के बाद वे द्वापरयुग के आरम्भ में पुजारी स्तिथि को प्राप्त होते है | सबसे पहले तो निराकार परमपिता परमात्मा शिव की हीरे की प्रतिमा बनाकर अनन्य भावना से उसकी पूजा करते है | यहाँ चित्र में उन्हें एक पुजारी राजा के रूप में शिव-पूजा करते दिखाया गया है | धीरे-धीरे वे सूक्ष्म देवताओं, अर्थात विष्णु तथा शंकर की पूजा शुरू करते है और बाद में अज्ञानता तथा आत्म-विस्मृति के कारण वे अपने ही पहले वाले श्रीनारायण तथा श्रीलक्ष्मी रूप की भी पूजा शुरू कर देते है | इसलिए कहावत प्रसिद्ध है कि "जो स्वयं कभी पूज्य थे, बाद में वे अपने-आप ही के पुजारी बन गए |" श्री लक्ष्मी और श्री नारायण की आत्माओं ने द्वापर युग के 1250 वर्षों में ऐसी पुजारी स्थिति में भिन्न-भिन्न नाम-रूप से, वैश्य-वंशी भक्त-शिरोमणि राजा,रानी अथवा सुखी प्रजा के रूप में कुल 21 जन्म लिए |

इसके बाद कलियुग का आरम्भ हुआ | अब तो सूक्ष्म लोक तथा साकार लोक के देवी-देवताओं की पूजा इत्यादि के अतिरिक्त तत्व पूजा भी शुरू हो गई | इस प्रकार, भक्ति भी व्यभिचारी हो गई | यह अवस्था सृष्टि की तमोप्रधान अथवा शुद्र अवस्था थी | इस काल में काम, क्रोध, मोह, लोभ और अहंकार उग्र रूप-धारण करते गए | कलियुग के अन्त में उन्होंने तथा उनके वंश के दूसरे लोगों ने कुल 42 जन्म लिए |

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि कुल 5000 वर्षों में उनकी आत्मा पूज्य और पुजारी अवस्था में कुल 84 जन्म लेती है | अब वह पुरानी, पतित दुनिया में 83 जन्म ले चुकी है | अब उनके अन्तिम, अर्थात 84 वे जन्म की वानप्रस्थ अवस्था में, परमपिता परमात्मा शिव ने उनका नाम "प्रजापिता ब्रह्मा" तथा उनकी मुख-वंशी कन्या का नाम "जगदम्बा सरस्वती" रखा है | इस प्रकार देवता-वंश की अन्य आत्माएं भी 5000 वर्ष में अधिकाधिक 84 जन्म लेती है | इसलिए भारत में जन्म-मरण के चक्र को "चौरासी का चक्कर" भी कहते है और कई देवियों के मंदिरों में 84 घंटे भी लगे होते है तथा उन्हें "84 घंटे वाली देवी" नाम से लोग याद करते है |

मनुष्यात्मा 84 लाख योनियाँ धारण नहीं करती

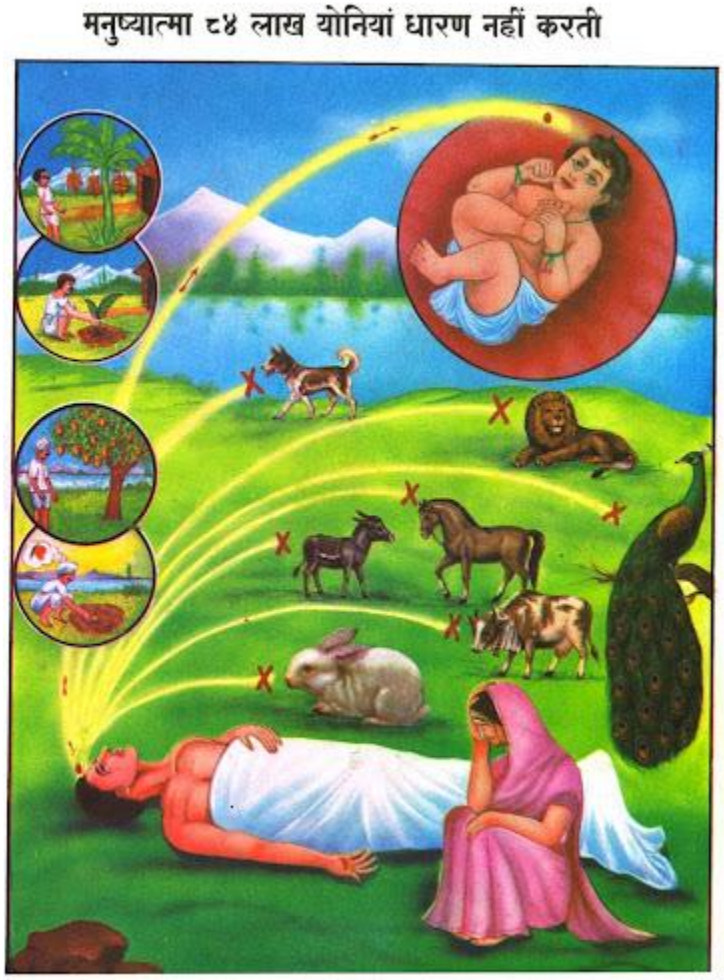

परमप्रिय परमपिता परमात्मा शिव ने वर्तमान समय जैसे हमें ईश्वरीय ज्ञान के अन्य अनेक मधुर रहस्य समझाये है, वैसे ही यह भी एक नई बात समझाई है कि वास्तव में मनुष्यात्माएं पाशविक योनियों में जन्म नहीं लेती | यह हमारे लिए बहुत ही खुशी की बात है | परन्तु फिर भी कई लोग ऐसे लोग है जो यह कहते कि मनुष्य आत्माएं पशु-पक्षी इत्यादि 84 लाख योनियों में जन्म-पुनर्जन्म लेती है |

वे कहते है कि- "जैसे किसी देश की सरकार अपराधी को दण्ड देने के लिए उसकी स्वतंत्रता को छीन लेती है और उसे एक कोठरी में बन्द कर देती है और उसे सुख-सुविधा से कुछ काल के लिए वंचित कर देती है, वैसे ही यदि मनुष्य कोई बुरे कर्म करता है तो उसे उसके दण्ड के रूप में पशु-पक्षी इत्यादि भोग-योनियों में दुःख तथा परतंत्रता भोगनी पड़ती है"|

परन्तु अब परमप्रिय परमपिता परमात्मा शिव ने समझया है कि मनुष्यात्माये अपने बुरे कर्मो का दण्ड मनुष्य-योनि में ही भोगती है | परमात्मा कहते है कि मनुष्य बुरे गुण-कर्म-स्वभाव के कारण पशु से भी अधिक बुरा तो बन ही जाता है और पशु-पक्षी से अधिक दुखी भी होता है, परन्तु वह पशु-पक्षी इत्यादि योनियों में जन्म नहीं लेता | यह तो हम देखते या सुनते भी है कि मनुष्य गूंगे, अंधे, बहरे, लंगड़े, कोढ़ी चिर-रोगी तथा कंगाल होते है, यह भी हम देखते है कि कई पशु भी मनुष्यों से अधिक स्वतंत्र तथा

सुखी होते है, उन्हें डबलरोटी और मक्खन खिलाया जाता है, सोफे (Sofa) पर सुलाया जाता है, मोटर-कार में यात्रा करी जाती है और बहुत ही प्यार तथा प्रेम से पाला जाता है परन्तु ऐसे कितने ही मनुष्य संसार में है जो भूखे और अद्-र्धनग्न जीवन व्यतीत करते है और जब वे पैसा या दो पैसे मांगने के लिए मनुष्यों के आगे हाथ फैलाते है तो अन्य मनुष्य उन्हें अपमानित करते है | कितने ही मनुष्य है जो सर्दी में ठिठुर कर, अथवा रोगियों की हालत में सड़क की पटरियों पर कुते से भी बुरी मौत मर जाते है और कितने ही मनुष्य तो अत्यंत वेदना और दुःख के वश अपने ही हाथो अपने आपको मार डालते है | अतः जब हम स्पष्ट देखते है कि मनुष्य-योनि भी भोगी-योनि है और कि मनुष्य-योनि में मनुष्य पशुओं से अधिक दुखी हो सकता है तो यह क्यों माना जाए कि मनुष्यात्मा को पशु-पक्षी इत्यादि योनियों में जन्म लेना पड़ता है ?

जैसा बीज वैसा वृक्ष :

इसके अतिरिक्त, यह्न एक मनुष्यात्मा में अपने जन्म-जन्मान्तर का पार्ट अनादि काल से अव्यक्त रूप में भरा हुआ है और, इसलये मनुष्यात्माएं अनादि काल से परस्पर भिन्न-भिन्न गुण-कर्म-स्वभाव प्रभाव और प्रारब्ध वाली है | मनुष्यात्माओं के गुण, कर्म, स्वभाव तथा पार्ट (Part) अन्य योनियों की आत्माओं के गुण, कर्म, स्वभाव से अनादिकाल से भिन्न है | अतः जैसे आम की गुठली से मिर्च पैदा नहीं हो सकती बल्कि "जैसा बीज वैसा ही वृक्ष होता है", ठीक वैसे ही मनुष्यात्माओं की तो श्रेणी ही अलग है | मनुष्यात्माएं पशु-पक्षी आदि 84 लाख योनियों में जन्म नहीं लेती | बल्कि, मनुष्यात्माएं सारे कल्प में मनुष्य-योनि में ही अधिक-से अधिक 84 जन्म, पुनर्जन्म लेकर अपने-अपने कर्मो के अनुरूप सुख-दुःख भोगती है |

यदि मनुष्यात्मा पशु योनि में पुनर्जन्म लेती तो मनुष्य गणना बढ़ती ना जाती :

आप स्वयं ही सोचिये कि यदि बुरी कर्मो के कारण मनुष्यात्मा का पुनर्जन्म पशु-योनि में होता, तब तो हर वर्ष मनुष्य-गणना बढ़ती ना जाती, बल्कि घटती जाती क्योंकि आज सभी के कर्म, विकारों के कारण विकर्म बन रहे है | परन्तु आप देखते है कि फिर भी मनुष्य-गणना बढ़ती ही जाती है, क्योंकि मनुष्य पशु-पक्षी या कीट-पतंग आदि योनियों में पुनर्जन्म नहीं ले रहे है |

सृष्टि नाटक का रचयिता और निर्देशक कौन है ?

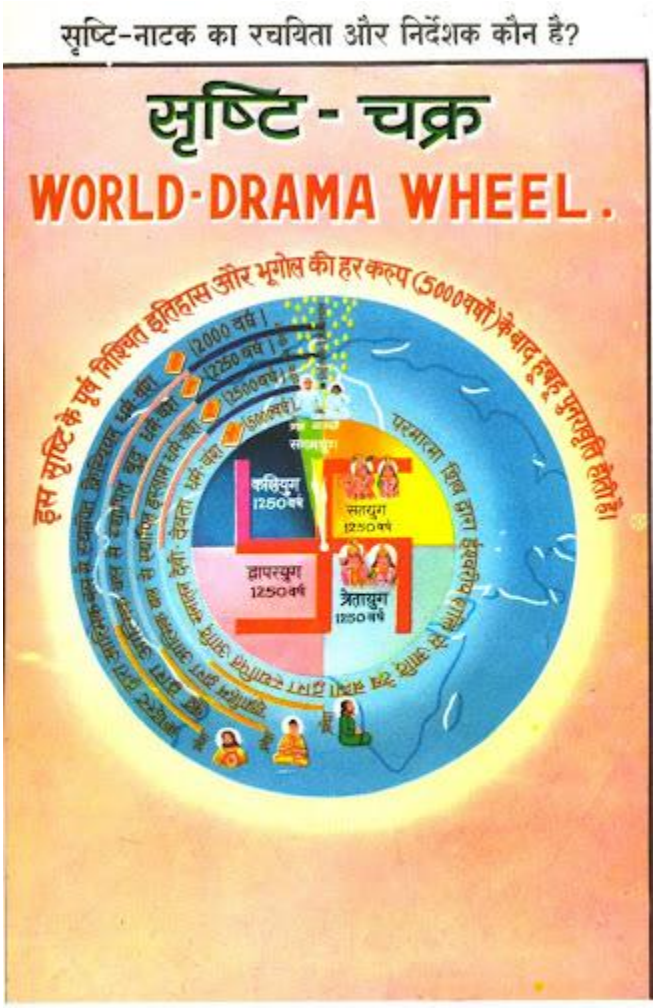

सृष्टि रूपी नाटक के चार पट

सामने दिए गए चित्र में दिखाया गया है कि स्वस्तिक सृष्टि -चक्र को चार बराबर भागो में बांटता है -- सतयुग,त्रेतायुग , द्वापर और कलियुग ।

सृष्टि नाटक में हर एक आत्मा का एक निश्चित समय पर परमधाम से इस सृष्टि रूपी नाटक के मंच पर आती है । सबसे पहले सतयुग और त्रेतायुग के सुन्दर दृश्य सामने आते है । और इन दो युगों की सम्पूर्ण सुखपूर्ण सृष्टि में पृथ्वी-मंच पर एक" अदि सनातन देवी देवता धर्म वंश "की ही मनुष्यात्माओ का पार्ट होता है। और अन्य सभी धर्म-वंशो की आत्माए परमधाम में होती है । अत :इन दो युगों में केवल इन्ही दो वंशो की ही मनुष्यात्माये अपनी-अपनी पवित्रता की स्तागे के अनुसार नम्बरवार आती है इसलिए, इन दो युगों में सभी अद्वेत पुर निर्वैर स्वभाव वाले होते है ।

द्वापरयुग में इसी धर्म की रजोगुणी अवस्था हो जाने से इब्राहीम द्वारा इस्लाम धर्म-वंश की, बुद्ध द्वारा बौद्ध-धर्म वंश की और ईसा द्वारा ईसाई धर्म की स्थापना होती है। अत : इन चार मुख्य धर्म वंशो के पिता ही संसार के मुख्य एक्टर्स है और इन चार धर्म के शास्त्र ही मुख्य शास्त्र है इसके अतिरिक्त, सन्यास धर्म के स्थापक नानक भी इस विश्व नाटक के मुख्य एक्टरो में से है । परन्तु फिर भी मुख्य रूप में पहले बताये गए चार

धर्मो पर ही सारा विश्व नाटक आधारित है इस अनेक मत-मतान्तरो के कारण द्वापर युग तथा कलियुग की सृष्टि में द्वेत, लड़ाई झगडा तथा दुःख होता है ।

कलियुग के अंत में, जब धर्म की आती ग्लानी हो जाती है, अर्थात विश्व का सबसे पहला "अदि सनातन देवी देवता धर्म "बहूत क्षीण हो जाता है और मनुष्य अत्यंत पतित हो जाते है, तब इस सृष्टि के रचयिता तथा निर्देशक परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा के तन में स्वयं अवतरित होते है । वे प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा मुख-वंशी कन्या "--ब्रह्माकुमारी सरस्वती " तथा अन्य ब्राह्मणों तथा ब्रह्मानियो को रचते है और उन द्वारा पुन : सभी को अलौकिक माता-पिता के रूप में मिलते है तथा ज्ञान द्वारा उनकी मार्ग-प्रदर्शना करते है और उन्हें मुक्ति तथा जीवनमुक्ति का ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार देते है । अत : प्रजपिता बह्मा तथा जगदम्बा सरस्वती, जिन्हें ही "एडम" अथवा "इव "अथवा" आदम और हव्वा "भी कहा जाता है इस सृष्टि नाटक के नायक और नायिका है। क्योंकि इन्ही द्वारा स्वयं परमपिता परमात्मा शिव पृथ्वी पर स्वर्ग स्थापन करते है कलियुग के अंत और सतयुग के आरंभ का यह छोटा सा संगम, अर्थात संगमयुग, जब परमात्मा अवतरित होते है, बहुत ही महत्वपूर्ण है ।

विश्व के इतिहास और भूगोल की पुनरावृत्ति

चित्र में यह भी दिखाया गया है कि कलियुग के अंत में परमपिता परमात्मा शिव जब महादेव शंकर के द्वारा सृष्टि का महाविनाश करते है तब लगभग सभी आत्मा रूपी एक्टर अपने प्यारे देश, अर्थात मुक्तिधाम को वापस लौट जाते है और फिर सतयुग के आरंभ से "अदि सनातन देवी देवता धर्म "कि मुख्य मनुष्यात्माये इस सृष्टि-मंच पर आना शुरू कर देती है। फिर २५०० वर्ष के बाद, द्वापरयुग के प्रारंभ से इब्राहीम के इस्लाम घराने की आत्माए, फिर बौद्ध धर्म वंश की आत्माए, फिर ईसाई धर्म वंश की आत्माए अपने-अपने समय पर सृष्टि-मंच पर फिर आकर अपना-अपन अनादि-निश्चित पार्ट बजाते है। और अपनी स्वर्णिम, रजत, ताम्र और लोह, चारो अवस्थाओ को पर करती है इस प्रकार, यह अनादि निश्चित सृष्टि-नाटक अनादि काल से हर ५००० वर्ष के बाद हुबहू पुनरावृत्त होता ही रहता है।

कलियुग अभी बच्चा नहीं है बल्कि बुढ़ा हो गया है

कलियुग अभी बच्चा नहीं है बल्कि बूढ़ा हो गया है

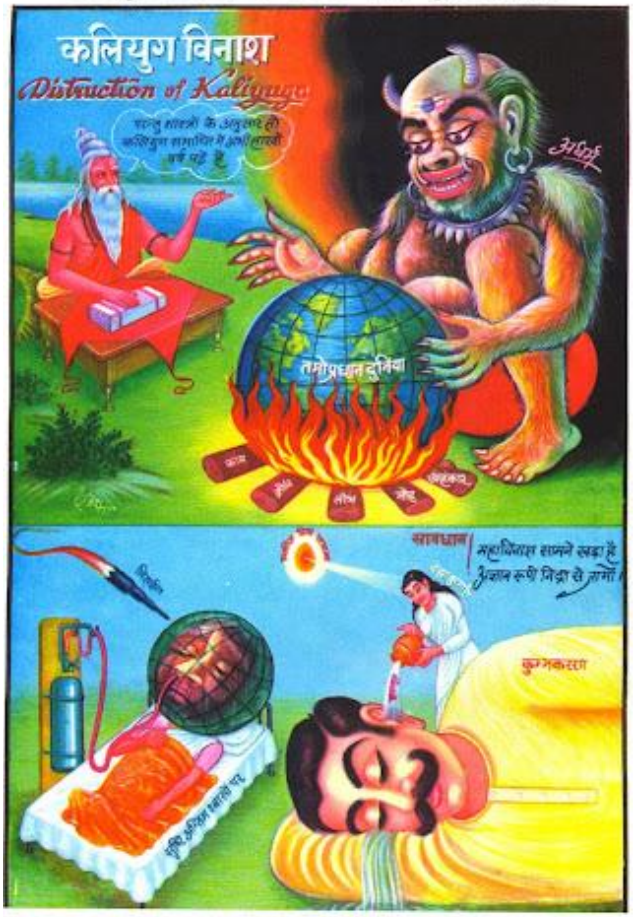

इसका विनाश निकट है और शीघ्र ही सतयुग आने वाला है |

आज बहुत से लोग कहते है , " कलियुग अभी बच्चा है अभी तो इसके लाखो वर्ष और रहते है शस्त्रों के अनुसार अभी तो सृष्टि के महाविनाश में बहुत काल रहता है | "

परन्तु अब परमपिता परमात्मा कहते है की अब तो कलियुग बुढा हो चूका है | अब तो सृष्टि के महाविनाश की घडी निकट आ पहुंची है | अब सभी देख भी रहे है की यह मनुष्य सृष्टि काम, क्रोध,लोभ,मोह तथा अहंकार की चिता पर जल रही है | सृष्टि के महाविनाश के लिए एटम बम, हाइड्रोजन बम तथा मुसल भी बन चुके है | अत :अब भी यदि कोई कहता है कि महाविनाश दूर है, तो वह घोर अज्ञान में है और कुम्भकर्णी निंद्रा में सोया हुआ है, वह अपना अकल्याण कर रहा है | अब जबकि परमपिता परमात्मा शिव अवतरित होकर ज्ञान अमृत पिला रहे है, तो वे लोग उनसे वंचित है |

आज तो वैज्ञानिक एवं विद्याओं के विशेषज्ञ भी कहते है कि जनसँख्या जिस तीव्र गति से बढ रही है, अन्न की उपज इस अनुपात से नहीं बढ रही है | इसलिए वे अत्यंत भयंकर अकाल के परिणामस्वरूप महाविनाश कि घोषणा करते है | पुनश्च, वातावरण प्रदुषण तथा पेट्रोल, कोयला इत्यादि शक्ति स्त्रोतों के कुछ वर्षो में ख़त्म हो जाने कि घोषणा भी वैज्ञानिक कर रहे है | अन्य लोग पृथ्वी के ठन्डे होते जाने होने के कारण हिम-पात कि बात बता रहे है | आज केवल रूस और अमेरिका के पास ही लाखो तन

बमों जितने आणविक शस्त्र है | इसके अतिरिक्त, आज का जीवन ऐसा विकारी एवं तनावपूर्ण हो गया है कि अभी करोडो वर्ष तक कलियुग को मन्ना तो इन सभी बातो की ओर आंखे मूंदना ही है परन्तु सभी को याद रहे कि परमात्मा अधर्म के महाविनाश से ही देवी धर्म की पुन :सथापना भी कराते है |

अत :सभी को मालूम होना चाहिए कि अब परमप्रिय परमपिता परमात्मा शिव सतयुगी पावन एवं देवी सृष्टि कि पुन :स्थापना करा रहे है | वे मनुष्य को देवता अथवा पतितो को पावन बना रहे है | अत :अब उन द्वारा सहज राजयोग तथा ज्ञान -यह अनमोल विद्या सीखकर जीवन को पावन, सतोप्रधन देवी, तथा आन्नदमय बनाने का सर्वोत्तम पुरुषार्थ करना चाहिए जो लोग यह समझ बैठे है कि अभी तो कलियुग में लाखो वर्ष शेष है, वे अपने ही सौभाग्य को लौटा रहे है!

अब कलियुगी सृष्टि अंतिम श्वास ले रही है, यह मृत्यु-शैया पर है यह काम, क्रोध लोभ, मोह और अहंकार रोगों द्वारा पीड़ित है | अत :इस सृष्टि की आयु अरबो वर्ष मानना भूल है | और कलियुग को अब बच्चा मानकर अज्ञान-निंद्रा में सोने वाले लीग" कुम्भकरण "है | जो मनुष्य इस ईश्वरीय सन्देश को एक कण से सुनकर दुसरे कण से निकल देते है उन्ही के कान ऐसे कुम्भ के समान है, क्योंकि कुम्भ बुद्धि-हीन होता है|

क्या रावण के दस सिर थे, रावण किसका प्रतीक है ?

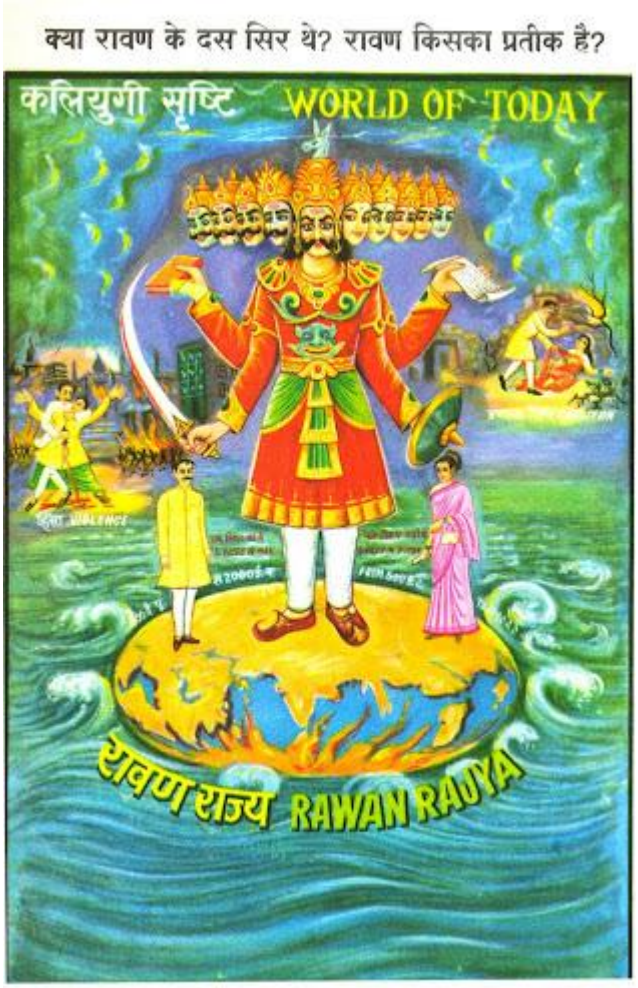

भारत के लोग प्रतिवर्ष रावण का बुत जलाते है। उनका काफी विश्वास है की एक दस सिर वाला रावण श्रीलंका का रजा था, वह एक बहुत बड़ा राक्षस था और उसने श्री सीता का अपहरण किया था। वे यह भी मानते है की रावण बहुत बड़ा विद्वान था इसलिए वे उसके हाथ में वेद, शास्त्र इत्यादि दिखाते है। साथ ही वे उसके शीश पर गधे का सिर भी दिखाते है। जिसका अर्थ वे यह लेते है की वह हठी ओर मतिहीन था लेकिन अब परमपिता परमात्मा शिव ने समझाया है की रावण कोई दस शीश वाला राक्षस (मनुष्य) नही था बल्कि रावण का पुतला वास्तव में बुरे का प्रतीक है रावण के दस सिर पुरुष और स्त्री के पांच-पांच विकारो को प्रकट करते है। और उसकी तुलना एक ऐसे समाज का प्रतिरूप है जो इस प्रकार के विकारी स्त्री-पुरुष का बना हो इस समाज के लोग बहुत ग्रन्थ और शास्त्र पड़े हुए तथा विज्ञानं में उच्च शिक्षा प्राप्त भी हो सकते है लेकिन वे हिंसा और अन्य विकारो के वशीभूत होते है। इस तरह उनकी विद्वता उन पर बोझ मात्र होती है। वे उद्दंड बन गए होते है। और भलाई की बातो के लिए उनके कान बंद हो गए होते है। " रावण " शब्द का अर्थ ही है - जो दुसरो को रुलाने वाला है। अत: यह बुरे कर्मो का प्रतीक है, क्योंकि बुरे कर्म ही तो मनुष्य के जीवन में दु:ख व् आंसू लाते है अतएव सीता के अपहरण का भाव वास्तव में आत्माओ की शुद्ध भावनाओ ही के अपहरण का सूचक

है । इसी प्रकार कुम्भकरण आलस्य का तथा " मेघनाथ" कटु वचनों का प्रतीक है और यह सारा संसार ही एक महाद्वीप है अथवा मनुष्य का मन ही लंका है ।

इस विचार से हम कह सकते है की इस विश्व में द्वापरयुग और कलियुग में (अर्थात २५०० वर्षो) " रावण राज्य" होता है क्योंकि इन दो युगों में लोग माया या विकारो के वशीभूत होते है उस समय अनेक पूजा पाठ करने तथा शास्त्र पढने के बाद भी मनुष्य विकारी, अधर्मी बन जाते है रोग ,शोक , अशांति और दुःख का सर्वत्र बोल बाला होता है । मनुष्यों का खानपान असुरो जैसा (मांस, मदिरा, तामसी भोजन आदि) बन जाता है वे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष आदि विकारो के वशीभूत होकर एक दुसरे को दुःख देते और रुलाते रहते है । ठीक इसके विपरीत स्वर्ण युग और रजत युग में राम-राज्य था, क्योंकि परमपिता, जिन्हें की रमणीक अथवा सुखदाता होने के कारण " राम" भी कहते है, ने उस पवित्रता, शांति और सुख संपन्न देसी स्वराज्य की पुनः स्थापना की थी उस राम राज्य के बारे में प्रसिद्द है की तब शहद और दूध की नदिया बहती थी और शेर तथा गाय एक ही घाट पर पानी पीते थे ।
अब वर्तमान में मनुष्यात्माये फिर से माया अर्थात रावण के प्रभाव में है औध्योगिक उन्नति, प्रचुर धन-धन्य और सांसारिक सुख - सभी साधन होते हुए भी मनुष्य को सच्चे सुख शांति की प्राप्ति नहीं है । घर-घर में कलह कलेश लड़ाई-झगडा और दुःख अशांति है तथा मिलावट, अधर्म और असत्यता का ही राज्य है तभी तो ऐसे " रावण राज्य" कहते है ।

अब परमात्मा शिव गीता में दिए अपने वचन के अनुसार सहज ज्ञान और राजयोग की शिक्षा दे रहे है और मनुष्यात्माओ के मनोविकारो को ख़त्म करके उनमे देवी गुण धारण करा रहे है (वे पुनः विश्व में बापू-गाँधी के स्वप्नों के राम राज्य की स्थापना करा रहे है ।) अतः हम सबको सत्य धर्म और निर्विकारी मार्ग अपनाते हुए परमात्मा के इस महान कार्य में सहयोगी बनना चाहिए ।

मनुष्य जीवन का लक्ष्य क्या है ?

मनुष्य का वर्तमान जीवन बड़ा अनमोल है क्योंकि अब संगमयुग में ही वह सर्वोत्तम पुरुषार्थ करके जन्म-जन्मान्तर के लिए सर्वोत्तम प्रारब्ध बना सकता है और अतुल हीरो-तुल्य कमाई कर सकता है ।

वह इसी जन्म में सृष्टि का मालिक अथवा जगतजीत बनने का पुरुषार्थ कर सकता है । परन्तु आज मनुष्य को जीवन का लक्ष्य मालूम न होने के कारण वह सर्वोत्तम पुरुषार्थ करने की बजाय इसे विषय-विकारो में गँवा रहा है । अथवा अल्पकाल की प्राप्ति में लगा रहा है । आज वह लौकिक शिक्षा द्वारा वकील, डाक्टर, इंजिनीयर बनने का पुरुषार्थ कर रहा है और कोई तो राजनीति में भाग लेकर देश का नेता, मंत्री अथवा प्रधानमंत्री बनने के प्रयत्न में लगा हुआ है अन्य कोई इन सभी का सन्यास करके, "सन्यासी" बनकर रहना चाहता है । परन्तु सभी जानते है की म्रत्यु-लोक में तो राजा-रानी, नेता वकील, इंजीनियर, डाक्टर, सन्यासी इत्यादि कोई भी पूर्ण सुखी नहीं है । सभी को तन का रोग, मन की अशांति, धन की कमी, जानता की चिंता या प्रकृति के द्वारा कोई पीड़ा, कुछ न कुछ तो दुःख लगा ही हुआ है । अतः इनकी प्राप्ति से मनुष्य जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती क्योंकि मनुष्य तो सम्पूर्ण - पवित्रता, सदा सुख और स्थाई शांति चाहता है ।

चित्र में अंकित किया गया है कि मनुष्य जीवन का लक्ष्य जीवन-मुक्ति की प्राप्ति अठेया वैकुण्ठ में सम्पूर्ण सुख-शांति-संपन्न श्री नारायण या श्री लक्ष्मी पद की प्राप्ति ही है । क्योंकि वैकुण्ठ के देवता तो अमर मने गए है, उनकी अकाल म्रत्यु नही होती; उनकी काया सदा निरोगी रहती है । और उनके खजाने में किसी भी प्रकार की कमी नहीं होती इसीलिए तो मनुष्य स्वर्ग अथवा वैकुण्ठ को याद करते है और जब उनका कोई प्रिय सम्बन्धी शरीर छोड़ता है तो वह कहते है कि -" वह स्वर्ग सिधार गया है " ।

इस पद की प्राप्ति स्वयं परमात्मा ही ईश्वरीय विद्या द्वारा कराते है

इस लक्ष्य की प्राप्ति कोई मनुष्य अर्थात कोई साधू-सन्यासी, गुरु या जगतगुरु नहीं करा सकता बल्कि यह दो ताजो वाला देव-पद अथवा राजा-रानी पद तो ज्ञान के सागर परमपिता परमात्मा शिव ही से प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग के अभ्यास से प्राप्त होता है ।

अत: जबकि परमपिता परमात्मा शिव ने इस सर्वोत्तम ईश्वरीय विद्या की शिक्षा देने के लिए प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की स्थापना की है । तो सभी नर-नारियो को चाहिए की अपने घर-गृहस्थ में रहते हुए, अपना कार्य धंधा करते हुए, प्रतिदिन एक-दो- घंटे निकलकर अपने भावी जन्म-जन्मान्तर के कल्याण के लिए इस सर्वोत्तम तथा सहज शिक्षा को प्राप्त करे ।

इस विद्या की प्राप्ति के लिए कुछ भी खर्च करने की आवश्यकता नही है, इसीलिए इसे तो निर्धन व्यक्ति भी प्राप्त कर अपना सौभाग्य बना सकते है । इस विद्या को तो कन्याओ, मतों, वृद्ध-पुरुषो, छोटे बच्चो

और अन्य सभी को प्राप्त करने का अधिकार है क्योंकि आत्मा की दृष्टी से तो सभी परमपिता परमात्मा की संतान है ।

अभी नहीं तो कभी नहीं

वर्तमान जन्म सभी का अंतिम जन्म है । इसलिय अब यह पुरुषार्थ न किया तो फिर यह कभी न हो सकेगा क्योंकि स्वयं ज्ञान सागर परमात्मा द्वारा दिया हुआ यह मूल गीता - ज्ञान कल्प में एक ही बार इस कल्याणकारी संगम युग में ही प्राप्त हो सकता है ।

निकट भविष्य में श्रीकृष्ण आ रहे है

निकट भविष्य में श्रीकृष्ण आ रहे हैं

प्रतिदिन समाचार -पत्रों में अकाल, बाड़, भ्रष्टाचार व् लड़ाई- झगडे का समाचार पदने को मिलता है । प्रकृति के पांच तत्व भी मनुष्य को दुःख दे रहे है और सारा ही वातावरण दूषित हो गया है । अत्याचार, विषय-विकार तथा अधर्म का ही बोलबाला है । और यह विश्व ही "काँटों का जंगल" बन गया है । एक समय था जबकि विश्व में सम्पूर्ण सुख शांति का साम्राज्य था और यह सृष्टि फूलो का बगीचा कहलाती थी । प्रकृति भी सतोप्रधान थी । और किसी प्रकार की प्राकृतिक आपदाए नही थी । मनुष्य भी सतोप्रधान , देविगुण संपन्न थे । और आनंद ख़ुशी से जीवन व्यतीत करते थे । उस समय यह संसार स्वर्ग था,

जिसे सतयुग भी कहते है इस विश्व में समृद्धि,, सुख, शांति का मुख्य कारण था कि उस समय के राजा तथा प्रजा सभी पवित्र और श्रेष्ठाचारी थे इसलिए उनको सोने के रत्न-जडित ताज के अतिरिक्त पवित्रता का ताज भी दिखाया गया है। श्रीकृष्ण तथा श्री राधा सतयुग के प्रथम महाराजकुमार और महाराजकुमारी थे जिनका स्वयंवर के पश्चात् " श्री नारायण और श्री लक्ष्मी" नाम पड़ता है। उनके राज्य में " शेर और गाय" भी एक घाट पर पानी पीते थे, अर्थात पशु पक्षी तक सम्पूर्ण अहिंसक थे। उस समय सभी श्रेष्ठाचारी, निर्विकारी अहिंसक और मर्यादा पुरुषोत्तम थे, तभी उनको देवता कहते है जबकि उसकी तुलना में आज का मनुष्य विकारी, दुखी और अशांत बन गया है। यह संसार भी रौरव नरक बन गया है। सभी नर-नारी काम क्रोधादि विषय-विकारो में गोता लगा रहे है। सभी के कंधे पर माया का जुआ है तथा एक भी मनुष्य विकारो और दुखो से मुक्त नहीं है।

अतः अब परमपिता परमात्मा, परम शिक्षक, परम सतगुरु परमात्मा शिव कहते है, " हे वत्सो ! तुम सभी जन्म-जन्मान्तर से मुझे पुकारते आये हो कि - हे पभो , हमें दुःख और अशांति से छुडाओ और हमें मुक्तिधाम तथा स्वर्ग में ले चलो। अतः अब में तुम्हे वापस मुक्तिधाम में ले चलने के लिए तथा इस सृष्टि को पावन अथवा स्वर्ग बनाने आया हु। वत्सो, वर्तमान जन्म सभी का अंतिम जन्म है अब आप वैकुण्ठ (सतयुगी पावन सृष्टि) में चलने की तैयारी करो अर्थात पवित्र और योग-युक्त बनो क्योंकि अब निकट भविष्य में श्रीकृष्ण (श्रीनारायण) का राज्य आने ही वाला है तथा इससे इस कलियुगी विकारी सृष्टि का महाविनाश एटम बमों, प्राकृतिक आपदाओ तथा गृह युद्ध से हो जायेगा। चित्र में श्रीकृष्ण को " विश्व के ग्लोब" के ऊपर मधुर बंशी बजाते हुए दिखाया है जिसका अर्थ यह है कि समस्त विश्व में "श्रीकृष्ण" (श्रीनारायण) का एक छात्र राज्य होगा, एक धर्म होगा, एक भाषा और एक मत होगी तथा सम्पूर्ण खुशहाली, समृद्धि और सुख चैन की बंशी बजेगी।

बहुत-से लोगो की यह मान्यता है कि श्रीकृष्ण द्वापर युग के अंत में आते है। उन्हें यह मालूम होना चाहिए कि श्रीकृष्ण तो सर्वगुण संपन्न, सोलह कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी एवं पूर्णतः पवित्र थे। तब भला उनका जन्म द्वापर युग की रजो प्रधान एवं विकारयुक्त सृष्टि में कैसे हो सकता है ? श्रीकृष्ण के दर्शन के लिए सूरदास ने अपनी अपवित्र दृष्टी को समाप्त करने की कोशिश की और श्रीकृष्ण- भक्तिन मीराबाई ने पवित्र

रहने के लिए जहर का प्याला पीना स्वीकार किया, तब भला श्रीकृष्ण देवता अपवित्र दृष्टी वाली सृष्टि में कैसे आ सकते है ? श्रीकृष्ण तो स्वयंबर के बाद श्रीनारायण कहलाये तभी तो श्रीकृष्ण के बुजुर्गी के चित्र नही मिलते । अत: श्रीकृष्ण अर्थात सतयुगी पावन सृष्टि के प्रारम्भ में आये थे और अब पुन: आने वाले है ।

सर्वशास्त्र शिरोमणि श्रीमद भगवद गीता का ज्ञान-दाता कौन है ?

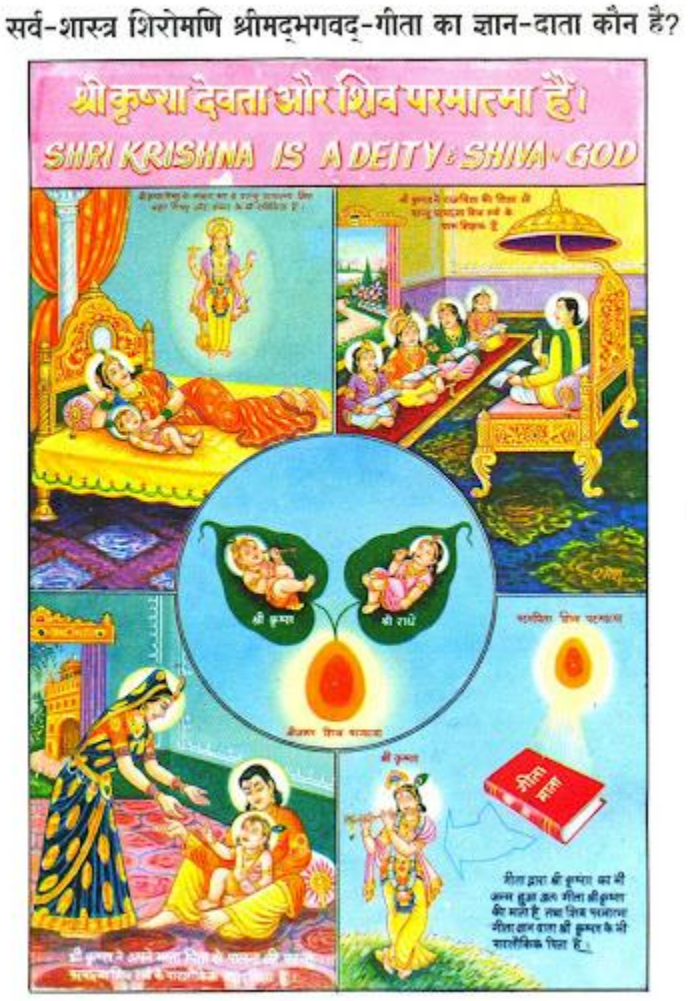

यह कितने आश्चर्य की बात है कि आज मनुष्यमात्र को यह भी नही मालूम की परमप्रिय परमात्मा शिव, जिन्हें " ज्ञान का सागर" तथा " कल्यानकारी " माना जाता है, ने मनुष्यमात्र के कल्याण के लिए जो ज्ञान दिया, उसका शास्त्र कौनसा है ? भारत में यद्यपि गीता ज्ञान को भगवान द्वारा दिया हुआ ज्ञान माना जाता है, तो आज भी सभी लोग यही मानते है गीता गया श्रीकृष्ण ने द्वापर युग के अंत में युद्ध के मैदान में, अर्जुन के रथ पर सवार होकर दिया था । गीता-ज्ञान द्वापर युग में नही दिया गया बल्कि संगम युग में दिया गया ।

चित्र में यह अदभुत रहस्य चित्रित किया गया है कि वास्तव में गीता-ज्ञान निराकार, परमपिता परमात्मा शिव ने दिया था । और फिर गीता ज्ञान से सतयुग में श्रीकृष्ण का

जन्म हुआ । अतः गोपेश्वर परमपिता शिव श्रीकृष्ण के भी परलौकिक पिता है और गीता श्रीकृष्ण कि भी माता है ।

यह तो सभी जानते है कि गीता-ज्ञान देने का उद्देश पृथ्वी पर धर्म की पुनः स्थापना ही था । गीता में भगवान ने स्पष्ट कहा है कि " मै अधर्म का विनाश तथा सत्यधर्म कि स्थापनार्थ ही अवतरित होता हूँ । " अतः भगवान के अवतरित होने तथा गीता ज्ञान देने के बाद तो धर्म की तथ देवी स्वभाव वाले सम्प्रदाय की पुनः स्थापना होनी चाहिए परन्तु सभी जानते और मानते है की द्वापरयुग के बाद तो कलियुग ही शुरू हुआ जिसमे तो धर्म की अधिक हनी हुई और मनुष्यों का स्वभाव तमोप्रधान अथवा आसुरी ही हुआ अतः जो लोग यह मानते है कि भगवान ने गीता ज्ञान द्वापरयुग के अंत में दिया, उन्हें सोचना चाहिए कि क्या गीता ज्ञान देने और भगवान के अवतरित होने का यही फल हुआ ? क्या गीता ज्ञान देने के बाद अधर्म का युग प्रारम्भ हुआ ? सपष्ट है कि उनका विवेक इस प्रश्न का uttar "न" शब्द से ही देगा ।

भगवान के अवतरण होने के बाद कलियुग का प्रारंभ मानना तो भगवान की ग्लानी करना है क्योंकि भगवान का यथार्थ परिचय तो यह है कि वे अवतरित होकर पृथ्वी को असुरो से खाली करते है । और यहाँ धर्म को पूर्ण कलाओं सहित स्थापित करके तथा नर को श्रीनारायण मनुष्य की सदगति करते है । भगवान तो सृष्टि के " बीज रूप " है तथा स्वरुप है, अतः इसी धरती पर उनके आने के पश्चात् तो नए सृष्टि-वृक्ष, अर्थात नई सतयुगी सृष्टि का प्रादुर्भाव होता है । इसके अतिरिक्त, यदि द्वापर के अंत में गीता ज्ञान दिया गया होता तो कलियुग के तमोप्रधान काल में तो उसकी प्रारब्ध ही न भोगी जा सकती । आज भी आप सीखते है कि दिवाली के दिनों में श्री लक्ष्मी का आह्वान करने के लिए भारतवासी अपने घरो को साफसुथरा करते है तथा दीपक आदि जलाते है इससे स्पष्ट है कि अपवित्रता और अंधकार वाले स्थान पर तो देवता अपने चरण भी नहीं धरते । अतः श्रीकृष्ण का अर्थात लक्ष्मीपति श्रीनारायण का जन्म द्वापर में मानना महान भूल है । उनका जन्म तो सतयुग में हुआ जबकि सभी मित्र -सम्बन्धी तथा प्रकृति-पदार्थ सतोप्रधन एवं दिव्य थे और सभी का आत्मा-रूपी दीपक जगा हुआ था तथा सृष्टि में कोई भी म्लेच्छ तथा क्लेश न था ।

अतः उपर्युक्त से स्पष्ट है कि न तो श्रीकृष ही द्वापरयुग में हुए और न ही गीता-ज्ञान द्वापर युग के अंत में दिया गया बल्कि निराकार, पतितपावन परमात्मा शिव ने कलियुग के अंत और सतयुग के आदि के संगम समय, दर्म-ग्लानी के समय, बह्मा तन में दिव्य जन्म लिया और गीता -ज्ञान देकर सतयुग कि तथा श्रीकृष्ण (श्रीनारायण) के स्वराज्य कि स्थापना कि श्रीकृष्ण के तो अपने माता-पिता, शिक्षक थे परन्तु गीता-ज्ञान सर्व आत्माओं के माता-पिता शिव ने दिया ।

गीता-ज्ञान हिंसक युद्ध करने के लिए नहीं दिया गया था

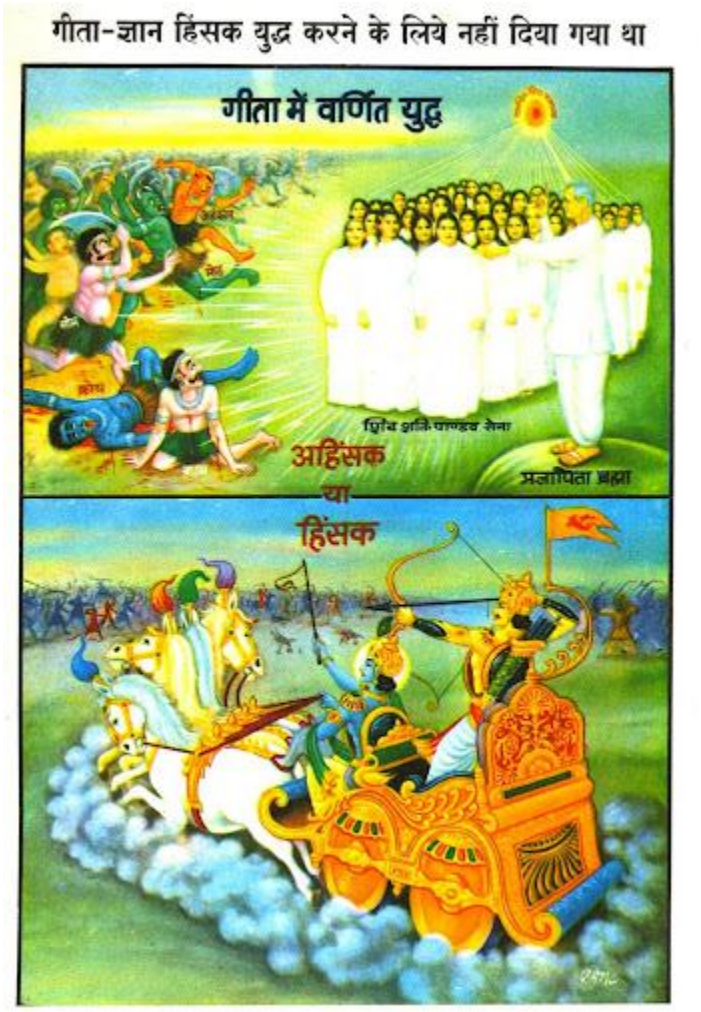

आज परमात्मा के दिव्य जन्म और "रथ" के स्वरुप को न जानने के कारण लोगो कि यह मान्यता दृढ़ है कि गीता-ज्ञान श्रीक्रष्ण ने अर्जुन के रथ एम् सवार होकर लड़ाई के मैदान में दिया आप ही सोचिये कि जबकि अहिंसा को धर्म का परम लक्षण माना गया है और जबकि धर्मात्मा अथवा महात्मा लोग नहो अहिंसा का पालन करते और अहिंसा की शिक्षा देते है तब क्या भगवान नव भला किसी हिंसक युद्ध के लिए किसी को शिक्षा दी होगी ? जबकि लौकिक पिता भी अपने बच्चो को यह शिक्षा देता है कि परस्पर न लड़ो तो क्या सृष्टि के परमपिता, शांति के सागर परमात्मा ने मनुष्यो को परस्पर लड़ाया होगा ! यह तो कदापि नहीं हो सकता भगवान तो देवी स्वभाव वाले संप्रदाय की तथा सर्वोत्तम धर्म की स्थापना के लिए ही गीता-ज्ञान देते है और उससे

तो मनुष्य राग, द्वेष, हिंसा और क्रोध इत्यादि पर विजय प्राप्त करते है। अतः वास्तविकता यह है कि निराकार परमपिता परमात्मा शिव ने इस सृष्टि रूपी कर्मक्षेत्र अथवा कुरुक्षेत्र पर, प्रजापिता बह्मा (अर्जुन) के शरीर रूपी रथ में सवार होकर माया अर्थात विकारो से ही युद्ध करने कि शिक्षा दी थी , परन्तु लेखक ने बाद में अलंकारिक भाषा में इसका वर्णन किया तथा चित्रकारों ने बाद में शरीर को रथ के रूप में अंकित करके प्रजापिता ब्रह्मा की आत्मा को भी उस रथ में एक मनुष्य (अर्जुन) के रूप में चित्रित किया। बाद में वास्तविक रहस्य प्रायःलुप्त हो गया और स्थूल अर्थ ही प्रचलित हो गया।

संगम युग में भगवान शिव ने जब प्रजापिता ब्रह्मा के तन रूपी रथ में अवतरित होकर ज्ञान दिया और धर्म की स्थापना की, तब उसके पश्चात् कलियुगी सृष्टि का महाविनाश हो गया और सतयुग स्थापन हुआ। अतः सर्व-महान परिवर्तन के कारण बाद में यह वास्तविक रहस्य प्रय्लुप्त हो गया। फिर जब द्वापरयुग के भक्तिकाल में गीता लिखी गयी तो बहुत पहले (संगमयुग में) हो चुके इस वृतांत का रूपांतरण व्यास ने वर्तमानकाल का प्रयोग करके किया तो समयांतर में गीता-ज्ञान को भी व्यास के जीवन-काल में, अर्थात " द्वापरयुग" में दिया गया ज्ञान मान लिया परन्तु इस भूल से संसार में बहुत बड़ी हानि हुई क्योंकि लोगो को यह रहस्य ठीक रीति से मालूम होता कि गीता-ज्ञान निराकार परमपिता परमात्मा शिव ने दिया जो कि श्रीकृष्ण के भी परलौकिक पिता है और सभी धर्मो के अनुयायियों के परम पूज्य तथा सबके एकमात्र सादगति दाता तथा राज्य-भग्य देने वाले है, तो सभी धर्मो के अनुयायी गीता को ही संसार का सर्वोत्तम शास्त्र मानते तथा उनके महावाक्यो को परमपिता के महावाक्य मानकर उनको शिरोधार्य करते और वे भारत को ही अपना सर्वोत्तम तीर्थ मानते अथः शिव जयंती को गीता -जयंती तथा गीता जयंती को शिव जयंती के रूप में भी मानते। वे एक ज्योतिस्वरूप, निराकार परमपिता, परमात्मा शिव से ही योग-युक्त होकर पावन बन जाते तथा उससे सुख-शांति की पूर्ण विरासत ले लेते परन्तु आज उपर्युक्त सवोत्तम रहस्यों को न जानने के कारण और गीता माता के पति सर्व मान्य निराकार परमपिता शिव के स्थान पर गीता-पुत्र श्रीकृष्ण देवता का नाम लिख देने के कारण गीता का ही खंडन हो गया और संसार में घोर अनर्थ, हाहाकार तथा पापाचार हो गया है और लोग एक निराकार परमपिता की आज्ञा (मन्मना भव अर्थात एक मुझ हो को याद करो) को

भूलकर व्यभिचारी बुद्धि वाले हो गए है ! ! आज फिर से उपर्युक्त रहस्य को जानकर परमपिता परमात्मा शिव से योग-युक्त होने से पुन: इस भारत में श्रीकृष्ण अथवा श्रीनारायण का सुखदायी स्वराज्य स्थापन हो सकता है और हो रहा है ।

जीवन कमल पुष्प समान कैसे बनायें ?

स्नेह और सौहाद्र के प्रभाव के कारण आज मनुष्य को घर में घर-जैसा अनुभव नहीं होता । एक मामूली कारण से घर का पूरा वातावरण बिगड़ जाता है । अब मनुष्य की वफ़ादारी और विश्वास्पात्रता भी टिकाऊ और दृढ़ नहीं रहे । नैतिक मूल्य अपने स्तर से काफी गिर गए है । कार्यालय हो या व्यवसाय, घर हो या रसोई, अब हर जगह परस्पर संबंधो को सुधारने, स्वयं को उससे ढालने और मिलजुल कर चलने की जरुरत है । अपनी स्थिति को निर्दोष एवं संतुलित बनाये रखने के लिए हर मानव को आज बहुत मनोबल इकट्ठा करने की आवशयकता है । इसके लिए योग बहुत ही सहायक हो सकता है ।

जो ब्रह्माकुमार है, वे दुसरो को भी शांति का मार्ग दर्शाना एक सेवा अथवा अपना कर्तव्य समझते है । ब्रह्माकुमार जन-जन को यह ज्ञान दे रहा है कि "शांति" पवित्र जीवन का एक फल है और पवित्रता एवं शांति के लिए परमपिता परमात्मा का परिचय तथा उनके साथ मान का नाता जोड़ना जरुरी है । अत: वह उन्हें राजयोग-केंद्र अथवा ईश्वरीय मनन चिंतन केंद्र पर पधारने के लिए आमंत्रित करता है, जहाँ उन्हें यह आवश्यक ज्ञान

दिया जाता है कि राजयोग का अभ्यास कैसे करे और जीवन को कमल पुष्प के समान कैसे बनाये इस ज्ञान और योग को समझने का फल यह होता है कि कोई कार्यालय में काम कर रहा हो या रसोई में कार्यरत हो तो भी मनुष्य शांति के सागर परमात्मा के साथ स्वयं का सम्बन्ध स्थापित कर सकता है । इस सब का श्रेष्ठ परिणाम यह होता है कि सारा परिवार प्यार और शांति के सूत्र में पिरो जाता है, वे सभी वातावरण में आन्नद एवं शांति का अनुभव करते है और अब वह परिवार एक सुव्यवस्थित एवं संगठित परिवार बन जाता है । दिव्य ज्ञान के द्वारा मनुष्य विकार तो छोड़ देता है और गुण धारण कर लेता है । इसके लिए, जिस मनोबल की जरुरत होती है, वह मनुष्य को योग से मिलता है । इस प्रकार मनुष्य अपने जीवन को कमल पुष्प के समान बनाने के योग्य हो जाता है ।

कमल की यह विशेषता है कि वह जल में रहते हुए जल से नायर होकर रहता है । हालाँकि कमल के अन्य सम्बन्धी, जैसे कि कमल ककड़ी, कमल डोडा इत्यादि है, परन्तु फिर भी कमल उन सभी से ऊपर उठकर रहता है । इसी प्रकार हमें भी अपने सम्बंधियो एवं मित्रजनो के बीच रहते हुए उनसे भी न्यारा, अर्थात मोहजीत होकर रहना चाहिए । कुछ लोग कहते है कि गृहस्थ में ऐसा होना असम्भव है । परन्तु हम देखते है कि अस्पताल में नर्स अनेक बच्चो को सँभालते हुए भी उनमे मोह-रहित होती है । इसे ही हमें भी चाहिए कि हम सभी को परमपिता परमात्मा के वत्स मानकर न्यासी (ट्रस्टी) होकर उनसे व्यवहार करे । एक न्यायाधीश भी ख़ुशी या गमी के निर्णय सुनाता है, परन्तु वह स्वयं उनके प्रभावाधीन नहीं होता । ऐसे ही हम भी सुख-दुःख कि परिस्थितियों में साक्षी होकर रहे, इसी के लिए हमें सहज राजयोग सिखने कि आवश्यकता है ।

राजयोग का आधार तथा विधि

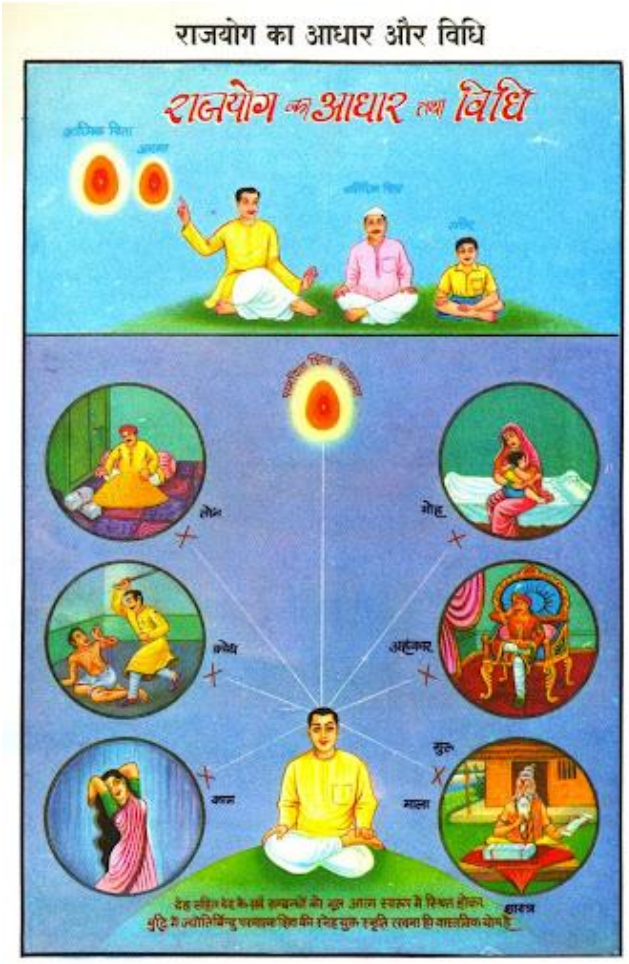

सम्पूर्ण स्थिति को प्राप्त करने के लिए और शीघ्र ही अध्यात्मिक में उन्नति प्राप्त करने के लिए मनुष्य को राजयोग के निरंतर अभ्यास की आवश्यकता है, अर्थात चलते फिरते और कार्य-व्यवहार करते हुए भी परमात्मा की स्मृति में स्थित होने को जरुरत है ।

यद्यपि निरंतर योग के बहुत लाभ है । और निरंतर योग द्वारा ही मनुष्य सर्वोत्तम अवस्था को प्राप्त कर सकता है । तथापि विशेष रूप से योग में बैठना आवश्यक है । इसीलिए चित्र में दिखाया गया है कि परमात्मा को याद करते समय हेम अपनी बुद्धि सब तरफ से हटाकर एक जोतिर्बिंदु परमात्मा शिव से जुटानी चाहिए मान चंचल होने के कारण काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार अथवा शास्त्र और गुरुओ की तरफ भागता है । लेकिन अभ्यास के द्वारा हमें इसको एक परमात्मा की याद में ही स्थित करना है । अत: देह सहित देह के सर्व-सम्भंधो को भूल कर आत्म-स्वरूप में स्थित होकर, बुद्धि में जोतिर्बिंदु परमात्मा शिव की स्नेहयुक्त स्मृति में रहना ही वास्तविक योग है जैसा की चित्र में दिखलाया गया है ।

कई मनुष्य योग को बहुत कठिन समझते है, वे कई प्रकार की हाथ क्रियाएं तप अथवा प्राणायाम करते रहते है । लेकिन वास्तव में "योग" अति सहज है जैसे की एक बच्चे को अपने देहधारी पिता की सहज और स्वत: याद रहती है वैसे ही आत्मा को अपने पिता परमात्मा की याद स्वत: और सहज होनी चाहिए इस अभ्यास के लिए यह सोचना चाहिए कि- " मैं एक आत्मा हूँ, मैं ज्योति -बिंदु परमात्मा शिव की अविनाशी संतान

हूँ जो परमपिता ब्रह्मलोक के वासी है, शांति के सागर, आनंद के सागर प्रेम के सागर और सर्वशक्तिमान है --। " ऐसा मनन करते हुए मन को ब्रह्मलोक में परमपिता परमात्मा शिव पर स्थित करना चाहिए और परमात्मा के दिव्य-गुणों और कर्तव्यो का ध्यान करना चाहिए ।

जब मन में इस प्रकार की स्मृति में स्थित होगा । तब सांसारिक संबंधो अथवा वस्तुओं का आकर्षण अनुभव नहीं होगा जितना ही परमात्मा द्वारा सिखाया गये ज्ञान में निश्चय होगा, उतना ही सांसारिक विचार और लौकिक संबंधियों की याद मन में नही आयेगी । और उतना ही अपने स्वरूप का परमप्रिय परमात्मा के गुणों का अनुभव होगा ।

आज बहुत से लोग कहते है कि हमारा मन परमात्मा कि स्मृति में नही टिकता अथवा हमारा योग नही लगता इसका एक कारण तो यह है कि वे " आत्म-निश्चय" में स्थित नही होते आप जानते है कि जब बिजली के दो तारो को जोड़ना होता है तब उनके ऊपर के रबड़ को हटाना पड़ता है, तभी उनमे करंट आता है इसी प्रकार, यदि कोई निज देह के बहन में होगा तो उसे भी अव्यक्त अनुभूति नही होगी, उसके मन की तार परमात्मा से नही जुड सकती ।

दूसरी बात यह है कि वे तो परमात्मा को नाम-रूप से न्यारा व् सर्वव्यापक मानते है, अत: वे मन को कोई ठिकाना भी नही दे सकते । परन्तु अब तो यह स्पष्ट किया गया है कि परमात्मा का दिव्य-नाम शिव, दिव्य-रूप ज्योति-बिंदु और दिव्यधाम परमधाम अथवा ब्रह्मलोक है अत: वहा मन को टिकाया जा सकता है ।

तीसरी बात यह है कि उन्हें परमात्मा के साथ अपने घनिष्ट सम्बन्ध का भी परिचय नही है, इसी कारण परमात्मा के प्रति उनके मन में घनिष्ट स्नेह नही अब यह ज्ञान हो जाने पर हमे ब्रह्मलोक के वासी परमप्रिय परमपिता शिव-जोती-बिंदु कि स्मृति में रहना चाहिए ।

राजयोग के स्तम्भ अथवा नियम

राजयोग के स्तम्भ अथवा नियम

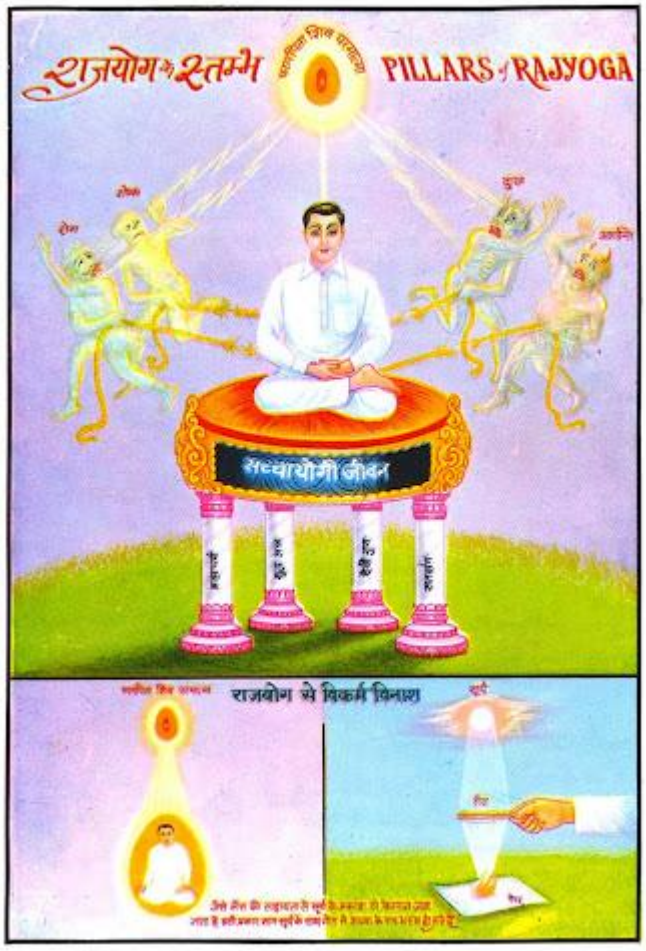

वास्तव में 'योग' का अर्थ – ज्ञान के सागर, शान्ति के सागर, आनन्द के सागर, प्रेम के सागर, सर्व शक्तिवान, पतितपावन परमात्मा शिव के साथ आत्मा का सम्बन्ध जोड़ना है ताकि आत्मा को भी शान्ति, आनन्द, प्रेम, पवित्रता, शक्ति और दिव्यगुणों की विरासत प्राप्त हो |

योग के अभ्यास के लिए उसे आचरण सम्बन्धी कुछ नियमों का अथवा दिव्य अनुशासन का पालन करना होता है क्योंकि योग का उद्धेश्य मन को शुद्ध करना, दृष्टी कोण में परिवर्तन लाना और मनुष्य के चित्त को सदा प्रसन्न अथवा हर्ष-युक्त बनाना है | दूसरे शब्दों में योग की उच्च स्थिति किन्ही आधारभूत स्तम्भों पर टिकी होती है |

इनमे से एक है – ब्रह्मचर्य या पवित्रता | योगी शारीरिक सुंदरता या वासना-भोग की और आकर्षित नहीं होता क्योंकि उसका दृष्टी कोण बदल चूका होता है | वह आत्मा की सुंदरता को ही पूर्ण महत्व देता है | उसका जीवन 'ब्रह्मचर्य' शब्द के वास्तविक अर्थ में ढला होता है | अर्थात उसका मन ब्रह्म में स्थित होता है और वह देह की अपेक्षा विदेही (आत्माभिमानी) अवस्था में रहता है | अतः वह सबको भाई भाई के रूप में देखता है और आत्मिक प्रेम व सम्बन्ध का ही आनन्द लेता है | यहाँ आत्मिक स्मृति और ब्रह्मचर्य इसे ही महान शारीरिक शक्ति, कार्य-क्षमता, नैतिक बल और आत्मिक शक्ति देते

है | यह उसके मनोबल को बढाते है और उसे निर्णय शक्ति, मानसिक संतुलन और कुशलता देते है |

दूसरा महत्वपूर्ण स्तम्भ है – सात्विक आहार | मनुष्य जो आहार कर्ता है उसका उसके मस्तिष्क पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है | इसलिए योगी मांस, अंडे उतेजक पेय या तम्बाकू नहीं लेता | अपना पेट पालने के लिए वह अन्य जीवों की हत्या नहीं करता, न ही वह अनुचित साधनों से धन कमाता है | वह पहले भगवान को भोग लगाता और तब प्रशाद के रूप में उसे ग्रहण करता है | भगवान द्वारा स्वीकृत वह भोजन उसके मन को शान्ति व पवित्रता देता है, तभी 'जैसा अन्न वैसा मन' की कहावत के अनुसार उसका मन शुद्ध होता है और उसकी कामना कल्याणकारी तथा भावना शुभ बनी रहती है |

अन्य महत्वपूर्ण स्तम्भ है –'सत्संग' | जैसा संग वैसा रंग' – इस कहावत के अनुसार योगी सदा इस बात का ध्यान रखता है कि उसका सदा 'सत-चित-आनन्द' स्वरूप परमात्मा के साथ ही संग बना रहे | वह कभी भी कुसंग में अथवा अश्लील साहित्य अथवा कुविचरों में अपना समय व्यर्थ नहीं गंवाता | वह एक ही प्रभु की याद व लग्न में मग्न रहता है तथा अज्ञानी, मिथ्या-अभिमानी अथवा विकारी, देहधारी मनुष्यों को याद नहीं करता और न ही उनसे सम्बन्ध जोड़ता है |

चौथा स्तम्भ है – दिव्यगुण | योगी सदा अन्य आत्माओं को भी अपने दिव्य-गुणों, विचारों तथा दिव्य कर्मो की सुगंध से अगरबत्ती की तरह सुगन्धित करता रहता है, न कि आसुरी स्वभाव, विचार व कर्मो के वशीभूत होता है | विनम्रता, संतोष, हर्षितमुख्ता, गम्भीरता, अंतर्मुखता, सहनशीलता और अन्य दिव्य-गुण योग का मुख्य आधार है | योगी स्वयं तो इन गुणों को धारण करता ही है, साथ ही अन्य दुखी भूली-भटकी और अशान्त आत्माओं को भी अपने गुणों का दान करता है और उसके जीवन में सच्ची सुख-शान्ति प्रदान करता है | इन नियमों को पालन करने से ही मनुष्य सच्चा योगी जीवन बना सकता है तथा रोग, शोक, दुःख व अशान्ति रूपी भूतों के बन्धन से छुटकारा पा सकता है |

राजयोग से प्राप्ति--अष्ट शक्तियां

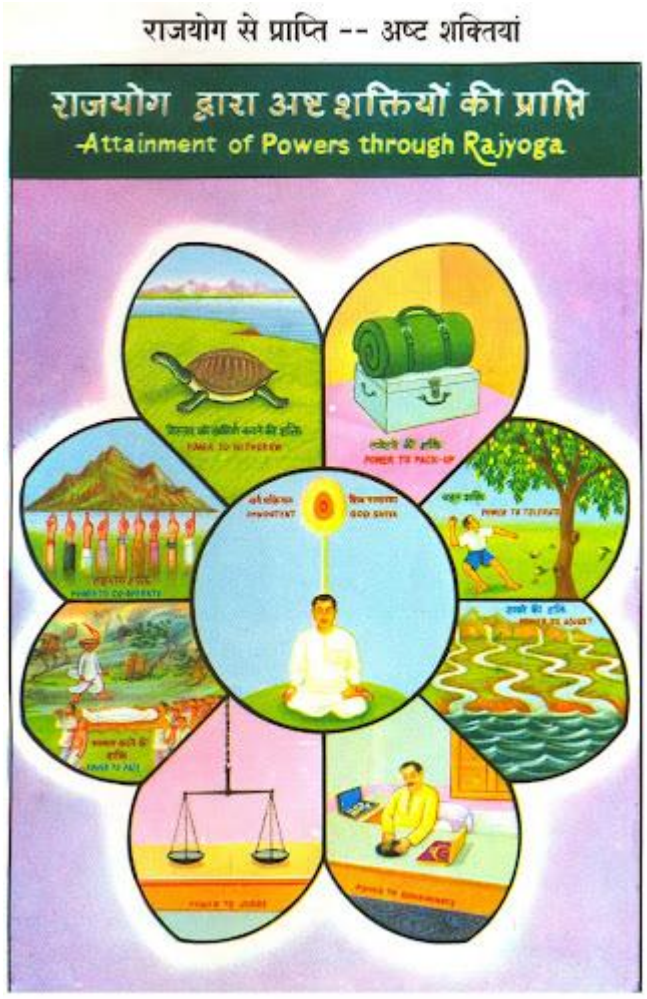

राज्योग के अभ्यास से, अर्थात मन का नाता परमपिता परमात्मा के साथ जोड़ने से, अविनाशी सुख-शांति कि प्राप्ति तो होती ही है, साथ ही कई प्रकार की अध्यात्मिक शक्तियां भी आ जाती है इनमे से आठ मुख्य और बहुत ही महत्वपूर्ण है।

इनमे से एक है " सिकोड़ने और फैलानी की शक्ति" जैसे कछुआ अपने अंगो को जब चाहे सिकोड़ लेता है, जब चाहे उन्हें फै लेता है, वैसे ही राजयोगी जब चाहे अपनी इच्छानुसार अपनी कर्मेन्द्रियों के द्वारा कर्म करता है और जब चाहे विदेही एवं शांत अवस्था में रह सकता है । इस प्रकार विदेही अवस्था में रहने से उस पर माया का वार नही होगा ।

दूसरी शक्ति है -" समेटने की शक्ति" इस संसार को मुसाफिर खाना तो सभी कहते है लेकिन व्यवहारिक जीवन में वे इतना तो विस्तार कर लेते है कि अपने कार्य और बुद्धि को समेटना चाहते हुए भी समेत नही पाते, जबकि योगी अपनी बुद्धि को इस विशाल दुनिया में न फैला कर एक परमपिता परमात्मा की तथा आत्मिक सम्बन्ध की याद में ही अपनी बुद्धि को लगाये रखता है । वह कलियुगी संसार से अपनी बुद्धि और संकल्पों का बिस्तर व् पेटी समेटकर सदा अपने घर-परमधाम- में चलने को तैयार रहता है ।

तीसरी शक्ति है " सहन शक्ति" जैसे वृक्ष पर पत्थर मारने पर भी मीठे फल देता है और अपकार करने वाले पर भी उपकार करता है, वैसे ही एक योगी भी सदा अपकार करने वालो के प्रति भी शुभ भावना और कामना ही रखता है ।

योग से जो चोथी शक्ति प्राप्त होती है वह है "समाने की शक्ति" योग का अभ्यास मनुष्य की बुद्धि विशाल बना देता है और मनुष्य गभीरता और मर्यादा का गुण धारण करता है । थोड़ी सी खुशिया, मान, पद पाकर वह अभ्मानी नही बन जाता और न ही किसी प्रकार की कमी आने पर या हानि होने के अवसर पर दुखी होता है वह तो समुद्र की तरह सदा अपने दैवी कुल की मर्यादा में बंधा रहता है और गंभीर अवस्था में रहकर दूसरी आत्माओं के अवगुणों को न देखते हुए केवल उनसे गुण ही धारण करता है ।

योग से जो अन्य शक्ति जो मिलती है वह है " परखने की शक्ति" जैसे एक पारखी (जौहरी) अभुश्नो को कसौटी पर परखकर उसकी असल और नक़ल को जन जाता है, इसे ही योगी भी, किसी भी मनुष्यात्मा के संपर्क में आने से उसको परख लेता है और उससे सच्चाई या झूठ कभी छिपा नही रह सकता । वह तो सदा सच्चे ज्ञान-रत्नों को ही अपनाता है तथा अज्ञानता के झूठे कंकड़, पत्थरों में अपनी बुद्धि नही फसाता ।

एक योगी को महान निर्णय शक्ति भी स्वत: प्राप्त हो जाती है । वह उचित और अनुचित बात का शीघ्र ही निर्णय कर लेता है । वह व्यर्थ सकल्प और परचिन्तन से मुक्त होकर सदा प्रभु चिंतन में रहता है । योग के अभ्यास से मनुष्य को " सामना करने की शक्ति" भी प्राप्त होती है । यदि उसके सामने अपने निकट सम्बन्धी की मृत्यु-जैसी आपदा आ भी जाये अथवा सांसारिक समस्याए तूफान का रूप भी धारण कर ले तो भी वह कभी विचलित नही होता और उसका आत्मा रूपी दीपक सदा ही जलता रहता है तथा अन्य आत्माओं को ज्ञान-प्रकाश देता रहता है ।

अन्य शक्ति, जो योग के अभ्यास से प्राप्त होती है, वह है " सहयोग की शक्ति" एक योगी अपने तन,मन, धन से तो ईश्वरीय सेवा करता ही है, साथ ही उसे अन्य आत्माओं का भी सहयोग स्वत: प्राप्त होता है, जिस कारण वे कलियुगी पहाड़ (विकारी संसार)

को उठाने में अपनी पवित्र जीवन रूपी अंगुली देकर स्वर्ग की स्थापने के पहाड़ समान कार्य में सहयोगी बन जाते है ।

राजयोग की यात्रा – स्वर्ग की और दौड़

राजयोग की यात्रा -- स्वर्ग की ओर दौड़

राजयोग की यात्रा – स्वर्ग की और दौड़ राजयोग के निरंतर अभ्यास से मनुष्य को अनेक प्रकार की शक्तियाँ प्राप्त होती है | इन शक्तियों के द्वारा ही मनुष्य सांसारिक रुकावटों को पार कर्ता हुआ आध्यात्मित्क मार्ग की और अग्रसर होता है | आज मनुष्य अनेक प्रकार के रोग, शोक, चिन्ता और परेशानियों से ग्रसित है और यह सृष्टि ही घोर नरक बन गई है | इससे निकलकर स्वर्ग में जाना हर एक प्राणी चाहता है लेकिन नरक से स्वर्ग की और का मार्ग कई रुकावटों से युक्त है | काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार उसके रास्ते में मुख्य बाधा डालते है | पुरुषोतम संगम युग में ज्ञान सागर परमात्मा शिव जो सहज राजयोग की शिक्षा प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा दे रहे है, उसे धारण करने से ही मनुष्य इन प्रबल शत्रुओं (५ विकारों) को जीत सकता है |

चित्र में दिखाया है कि नरक से स्वर्ग में जाने के लिए पहले-पहले मनुष्य को काम विकार की ऊंची दीवार को पार करना पड़ता है जिसमे नुकीले शीशों की बाढ़ लगी हुई है | सको पार करने में कई व्यक्ति देह-अभिमान के कारण से सफलता नहीं प् सकते है और इसीलिए नुकीलें शीशों पर गिरकर लहू-लुहान हो जाते है | विकारी दृष्टी, कृति, वृति ही मनुष्य को इस दीवार को पार नहीं करने देती | अत: पवित्र दृष्टी (Civil Eye) बनाना इन विकारों को जीतने के लिए अति आवश्यक है |

दूसरा भयंकर विघ्न क्रोध रूपी अग्नि-चक्र है | क्रोध के वश होकर मनुष्य सत्य और असत्य की पहचान भी नहीं कर पाता है और साथ ही उसमे ईर्ष्या, द्वेष, घृणा आदि विकारों का समावेश हो जाता है जिसकी अग्नि में वह स्वयं तो जलता ही है साथ में अन्य मनुष्यों को भी जलाता है | इस भधा को पार करने के लिए 'स्वधर्म' में अर्थात 'मैं आत्मा शांत स्वरूप हूँ' – इस स्तिथि में स्थित होना अत्यावश्यक है |

लोभ भी मनुष्य को उसके सत्य पथ से प्रे हटाने के लिए मार्ग में खड़ा है | लोभी मनुष्य को कभी भी शान्ति नहीं मिल सकती और वह मन को परमात्मा की याद में नहीं टिका सकता | अत: स्वर्ग की प्राप्ति के लिए मनुष्य को धन व खजाने के लालच और सोने की चमक के आकर्षण पर भी जीत पानी है |

मोह भी एक ऐसी बाधा है जो जाल की तरह खड़ी रहती है | मनुष्य मोह के कड़े बन्धन-वश, अपने धर्म व कार्य को भूल जाता है और पुरुषार्थ हींन बन जाता है | तभी गीता में भगवान ने कहा है कि 'नष्टोमोहा स्मृतिर्लब्धा:' बनो, अर्थात देह सहित देह के सर्व सम्बन्धों के मोह-जाल से निकल कर परमात्मा की याद में स्थित हो जाओ और अपने कर्तव्य को करो, इससे ही स्वर्ग की प्राप्ति हो सकेगी | इसके लिए आवश्यक है कि मनुष्यात्मा मोह के बन्धनों से मुक्ति पाए, तभी माया के बन्धनों से छुटकारा मिलेगा और स्वर्ग की प्राप्ति होगी |

अंहकार भी मनुष्य की उन्नति के मार्ग में पहाड़ की तरह रुकावट डालता है | अहंकारी मनुष्य कभी भी परमात्मा के निकट नहीं पहुँच सकता है | अहंकार के वश ,मनुष्य पहाड़ की ऊंची छोटी से गिरने के समान चकनाचूर हो जाता है | अत: स्वर्ग में जाने के लिए अहंकार को भी जीतना आवश्यक है | अत: याद रहे कि इन विकारों पर विजय प्राप्त करके मनुष्य से देवता बनने वाले ही नर-नारी स्वर्ग में जा सकती है, वरना हर एक व्यक्ति के मरने के बाद जो यह ख दिया जाता है कि 'वह स्वर्गवासी हुआ', यह सरासर गलत है | यदि हर कोई मरने के बाद स्वर्ग जा रहा होता तो जन-संख्या कम हो जाती और स्वर्ग में भीड़ लग जाती और मृतक के सम्बन्धी मातम न करते |

इस पथ-प्रदर्शनी में जो ईश्वरीय ज्ञान, व सहज राजयोग लिपि-बद्ध किया गया है, उसकी विस्तारपूर्वक शिक्षा प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विधालय में दी जाती है | ऊपर जो चित्र अंकित क्या गया है, वह उसके मुख्य शिक्षा-स्थान तथा मुख्य कार्यालय का है | इस ईश्वरीय विश्व-विधालय की स्थापना परमप्रिय परमपिता परमात्मा ज्योति-बिन्दु शिव ने 1937 में सिन्ध में की थी | परमपिता परमात्मा शिव परमधाम अर्थात ब्रह्मलोक से अवतरित होकर एक साधारण एवं वृद्ध मनुष्य के तन में प्रविष्ट हुए थे क्योंकि किसी मानवीय मुख का प्रयोग किए बिना निराकार परमात्मा अन्य किसी रीति से ज्ञान देते?

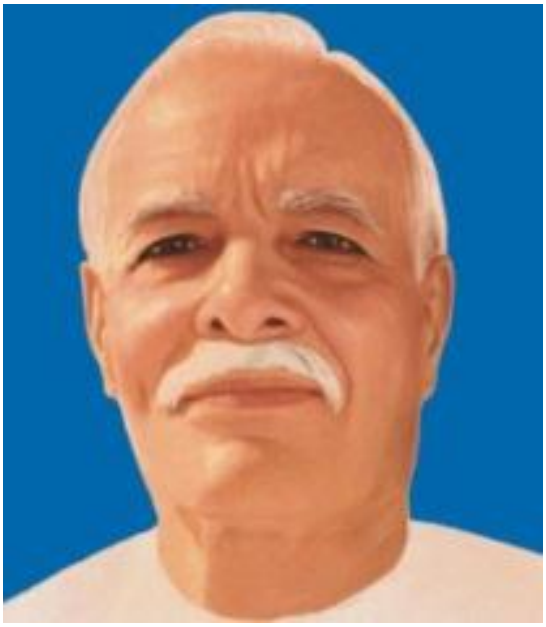

ज्ञान एवं सहज राजयोग के द्वारा सतयुग की स्थापनार्थ ज्योति-बिन्दु शिव का जिस मनुष्य के तन में 'दिव्य प्रवेश' अथवा दिव्य जन्म हुआ, उस मनुष्य को उन्होंने 'प्रजापिता ब्रह्मा'-यह अलौकिक नाम दिया | उनके मुखार्विन्द द्वारा ज्ञान एवं योग की शिक्षा लेकर ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने वाले तथा पूर्ण पवित्रता का व्रत लेने वाले नर और नारियों को क्रमश: मुख-वंशी 'ब्राह्मण' तथा 'ब्राह्मनियाँ' अथवा 'ब्रह्माकुमार' और ब्रह्माकुमारियाँ' कहा जाता है क्योंकि उनका आध्यात्मिक नव-जीवन ब्रह्मा के श्रीमुख द्वारा विनिसृत ज्ञान से हुआ |

परमपिता शिव तो त्रिकालदर्शी है; वे तो उनके जन्म-जन्मान्तर की जीवन कहानी को जानते थे कि यह ही सतयुग के आरम्भ में पूज्य श्री नारायण थे और समयान्तर में कलाएं कम होते-होते अब इस अवस्था को प्राप्त हुए थे | अत: इनके तन में प्रविष्ट होकर उन्होंने सन 1937 में इस अविनाशी ज्ञान-यज्ञ की अथवा ईश्वरीय विश्व-विधालय की 5000 वर्ष पहले की भांति, पुन: स्थापना की | इन्ही प्रजापिता ब्रह्मा को ही महाभारत की भाषा में 'भगवान का रथ' भी कहा जाता सकता है, ज्ञान-गंगा लाने के निमित बनने वाले 'भागीरथ' भी और 'शिव' वाहन 'नन्दीगण' भी |

जिस मनुष्य के तन में परमात्मा शिव ने प्रवेश किया, वह उस समय कलकता में एक विख्यात जौहरी थे और श्री नारायण के अनन्य भक्त थे | उनमें उदारता, सर्व के कल्याण की भावना, व्यवहार-कुशलता, राजकुलोचित शालीनता और प्रभु मिलन की उत्कट चाह थी | उनके सम्बन्ध राजाओं-महाराजाओं से भी थे, समाज के मुखियों से भी और साधारण एवं निम्न वर्ग से भी खूब परिचित थे | अत: वे अनुभवी भी थे और उन दिनों उनमें भक्ति की पराकाष्ठा तथा वैराग्य की अनुकूल भूमिका भी थी |

अन्यश्च प्रवृति को दिव्य बनाने के लिए माध्यम भी प्रवृति मार्ग वाले ही व्यक्ति का होना उचित था | इन तथा अन्य अनेकानेक कारणों से त्रिकालदर्शी परमपिता शिव ने उनके तन में प्रवेश किया |

उनके मुख द्वारा ज्ञान एवं योग की शिक्षा लेने वाले सभी ब्रह्माकुमारों एवं ब्रह्माकुमारियों में जो श्रेष्ठ थी, उनका इस अलौकिक जीवन का नाम हुआ – जगदम्बा सरस्वती | वह 'यज्ञ-माता' हुई | उन्होंने ज्ञान-वीणा द्वारा जन-जन को प्रभु-परिचय देकर उनमें आध्यात्मिक जागृति लाई | उन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किया और सहज राजयोग द्वारा अनेक मनुष्यात्माओं की ज्योति जगाई | प्रजापिता ब्रह्मा और जगदम्बा सरस्वती ने पवित्र एवं दैवी जीं का आदर्श उपस्थित किया |